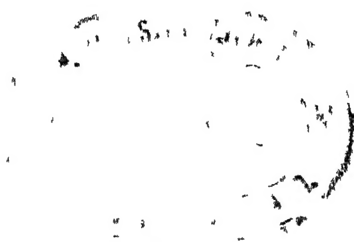
अठारह सूरज के पौधे

रमेश बक्षी





भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक–२२५

सम्पादक एवं नियामक :

लक्ष्मीचन्द्र जैन

Lokodaya Series Title No 225

ATHARAH SOORAJ KE PAUDHE

(Novel)

RAMESH BAKSHI

Bharatiya Jnanpith Publication

First Edition 1965

Price Rs 3 00



प्रकाशन

प्रधान कार्यालय

९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

प्रकाशन कार्यालय

दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-५

विक्रय-केन्द्र

३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

प्रथम संस्करण १९६५

मूल्य ३.००

सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी-५

परम्परा के प्रति सञ्चित घृणा सहित

दादा और जीजी को

कोई पहिया ढलानमे अपनी गतिका दुहराता-तिहराता पागलकी तरह निर्बाध दौडे चला जा रहा हो ···शीशेके पारसे यात्री गुजरते हुए नदी-नाले-पहाड-टीले-मैदान-बंजर-खेत-खलिहान-पेड-पौधे-गाँव प्लैटफॉर्म अनठहरी आँखोसे देखे जा रहा हो··· वह गतिमय हलचल शरीर झकझोरती जा रही हो····जिस गतिपर यात्री सवार हो वह यन्त्रके किसी भी स्वरूपकी हो—कार, लॉच एरोप्लेन, ट्रेन या कुछ भी' शर्त यही कि सूरज गुजरते जाये—एक्दोतिन्चार्पाच····और सुबह-दुपहर-शाम-रात सब रास्तेपर गिरी हुई पत्तियोकी तरह पहियेसे लिपट-लिपटकर पीछे छूटती जाये—एक सूरज पीठपर पहुँचे और दूसरा आँखोपर आ जाये, एक शोर दूसरे शोरको जन्म दे, एक गति दूसरी गतिमे जुड जाये···· हकीकतमे यह गति दिख रही हो, जैसे दोके घण्टे पडे—टण्ण, टण्ण····, ह्विसिल हो, सीटी बजे, ट्रेनके भारी-भारी पहिये लुढकन ले और ध्वनि आगे बढे—

छोक् –

छाक्क् –

छक्छक्छक् –

छक्छक्छक्छक्छक्छक् –

या मन.स्थितिका कोई भी बिन्दु उत्तेजनासे उबल रहा हो तब—तब ऊपरवाली बर्थपर सोये हुए या चर्चगेटकी भीडके बीच खडे हुए मेरा यह उपन्यास पढा जाये।···· इस एक गतिको पकडनेके लिए मै यात्रामे यात्रा जोडता रहा। मारीनेत्ती[1] तो घोपणा करके ही रह गया कि

'फ्यूचरिज़्म'[२] भविष्यको गतिसे बाँधनेका प्रयास है, उसके सब हाथी आडो तेडो, गोलमगोल, कँपकँपती लकीरोसे दौडती हुई ज़िन्दगीको बाँधते-बाँधते हार गये। मुझे उस क्यूबिज़्मके गतिमान रूप फ्यूचरिज़्मसे क्या सरोकार, मैंने तो उसमे-से एक गति ले ली और अपने पासके असंख्य साधन—ध्वनि और वर्णन और यन्त्र और शोर और संघर्ष और युद्ध और पिस्टन-गियर और बैलेन्स-ह्वील और सबको ले लिया।'...

इस मशीनी दौडके बीच, कन्धे ठेलती भीडके बीच, अनसुने शोरके बीच मेरी नयी पीढीका आदमी कहाँ उलझ रहा है? 'ताजमहलोकी भीडके पार, वर्तमानके पहियोसे दूर, गतिमय कलके बीच—एक दृष्टिको, एक स्वरको, एक रेखाको पकडना होगा, तब कही उसकी एक झलक देखी जा सकेगी।

बम्बईकी फास्ट और डबल-फास्ट लाइफ, पठानकोटसे वी० टी० तककी दूरी, एक लगातार चलती और चलती ट्रेन, एक मूर्ति वीनस, सँकरा वर्तमान, अनन्त विस्तारवाला अतीत और सोया हुआ भविष्य... रोज़ युद्ध, रोज़ संघर्ष। महाभारतकी लम्बाईको नापनेवाले सूरजके पहिये और मेरी नयी पीढीके आदमीका उलझनभरा जीवन, जैसे कि उस भयंकर युद्धके अठारह दिनोको नापनेवाले सूरजकी इकाईसे किसीने हमारी एक-एक ज़िन्दगीको नाप डाला है।

सूरज और संजय तो नही बदले, युग और युयुत्सु (युद्धकी इच्छावाले) बदल गये।

और पौधे? उन्होंने ही तो यह अकथा मुझसे लिखवायी है। उन्हींपर सूरज की दृष्टि है। मैं नही जानता कि यह एक रोबॅटकी मानवीय ट्रैजेडी है या रूपायित होते नये समाजकी तसवीर........

हाँ, बादको मेरा ही विकास रमेश बक्षीके रूपमे हुआ है। यह एक ऐसी व्यक्तिगत बात है जिसे नही जाननेसे यह उपन्यास कमज़ोर लगेगा।

एक नाराज़ तारीख़ १९६५
कलकत्ता

— *रमेश बक्षी*

अठारह
सूरज
के
पौधे

••

कोई पुल है क्या ?

खड – खड – खड,

खड – खड – खड,

खड – खड – खड – खड – खड – खड –

मै बर्थको पकडे हूँ। कम्बल ऊपर खींच लेता हूँ, पुल ही है····पुल कितने सारे आते है इस रास्ते ! हर बार सारे शरीरको हिलानेवाली खड-खड – खड, खड – खड – खड, जैसे लोहेके शिकंजेमे रखी दूध-भरी बोतले हो हम, शिकजा चलती गाडीमें रखा हुआ है और हम ही आपसमे टकरा-टकराकर आवाजें पैदा कर रहे है, यानी यह जो खड – खड – खड हुई थी···गुज़र गयी अब तो। और अब वही आवाज फिर लौट आयी है :

छक् – छक् – छक्

छक् – छक् – छक्

छक्छक्छक्छक्छक्छक्···

कम्बलको जरा सिरसे हटाये सोच रहा हूँ कि अब मुझे पूछ लेना चाहिए। फिर बर्थका सिरा पकड नीचे झाँक रहा हूँ। नीचे एक सरदार साहब पगड़ी उतारे खिडकीसे टिके है और गुटका लिये भजन पढ रहे है। डिब्बेमे फैला बल्बका पीलापन नीदमे डूबा हुआ लग रहा है। पता नही कण्डक्टर कहाँ चला गया···शायद चेकिंग कर रहा हो। खैर, अभी कौन जल्दी है, थोडी देर बाद पूछ लूँगा। मैं और नीचे झाँक आया हूँ—धूप खिल आयी है, नरम धूप हिलती हुई शीशेपर घुटने चल रही है। कितनी जल्दी सुबह हो जाती है यहाँ ! जब भी आँखें खोलो – साफ आकाश

और कुहरेकी परतें, फिर सारे दिन कुहरेका कटना और धूपका शरीर होना चलता रहता है। इतनेसे झुकनेमें गरदनसे लगा कन्धों तक दर्द रेंग आया है, सारे शरीरको किसीने जैसे पछारकर रख दिया है···घूमते हुए गोलमगोल पहिये और उनकी गतिपर रखा मेरा कँपकँपाता शरीर, पलकोमे जैसे वज़न हो आया है, आँखोमे काँटे चुभ रहे है। मै सोच रहा था जो कम्बल खीच सोऊँगा तो सारी दूरी अपनी गहरी नीदसे नाप डालूँगा। काँटे पूरा डायल घूम जायेंगे, मुझपर-से सुबहे – दुपहरें – शामे – रातें सब गुज़र जायेगी और मै अपनी जगह जब उतरूँगा तो एक खयाल आगे चला होऊँगा।

·· एक खयाल आगे या एक खयाल पीछे? शायद आगे, शायद पीछे··· मै अभीतक नीचे ही झाँक रहा हूँ। नही, नीचे नही झाँकना चाहिए, नीचे झाँकनेसे सर्दी लगती है···

"जी।"

"थ्वाडा कम्बल निच्चे गिर गया बाश्शा।"[3]

"हाँ, जब ट्रेन पुलकी कैंचियोमे-से छूटी थी तब नीचे गिरा होगा।···"

मै कम्बल खूब अच्छेसे ओढ लेता हूँ। रेलकी सीटी रुक-रुककर दो बार बजती है : ई – ई – ई, ई – ई – ई ··ऐसा लगता है जैसे वेल्डिंग करते समय बिजलीकी सुईसे कोई चिनगारियोको लिख रहा हो।

फिर पुल। फिर खड – खड – खड – खड – खड – खड़। मेरी आँखे बन्द है। मै अपनी नब्ज देख रहा हूँ, खूनके बहनेकी गति महसूस कर रहा हूँ : एक्दोतिन्चार्पाँच्छे, सात्ताठनौदस्ग्यार्बारा···

छक् – छक् – छक्,

छक – छक – छक्,

छक्छक्छक्छक्छक्छक्छक्······

मेरी आँखें खुल गयी है, बड़ी ज़ोरका हल्ला, धक्कामुक्की, रेलठेल,

सामान रखने-उठानेकी आवाज़ें····

"अण्णा !"[४]

"निझून जा ।"[५]

मैं फिर सो गया हूँ। किसी पुलपर-से ट्रेन गुज़र रही है : खड—खड—खड — खड — खड — खड। फिर ट्रेन आहिस्ता हुई है — एक छक्, दूसरी छक्क, तीसरी छक्क्। फिर आवाज़ें उभरने लगी है : चाय — गर्रम चाय····पान — बिडि — सिग्रिट ··पूड़ी — गर्रम — साग्गर्रम··· दूध- मिठा-दूध·· ·

"अण्णा।"

"काय ?"[६]

"काय आला ?"[७]

"आसा असेल रे !"[८]

फिर मेरी आँखे लग गयी है। फिर कोई बहुत बडा स्टेशन आया है। रेलमे पानी डाला जा रहा है। डिब्बेके ऊपरसे एक धार नीचे उतरती शीशेपर सरकती बिलकुल नीचे उतर रही है। एक खिलौनेवाला धीरे-धीरे चल रहा है — 'खिलवने · खिलवने-लकडीके !' उसके हाथमे लकडी-की एक रेल है। अच्छा चमकीला रंग उसपर पुता है — खूब लम्बी है। मैंने उठानेकी कोशिश तो की लेकिन मुझसे शीशा नही उठा····

"अण्णा !"

"काय ?" और अण्णा एकदम उठ बैठे हैं, "काय आला ? भुसावल आला काय ?"

मुझे दुःख है कि यह भुसावल ही निकला। फटाफट अपना सामान बाहर फेंका गया और हम उतर आये है। अण्णाने किसी जगह भी मुझे कुछ नही खरीदने दिया। उस खिलौनेवालेको ठीकसे देखने भी नही दिया।···पुलपर चढ़ आये है और मैं नीचे झाँक-झाँककर देख रहा हूँ····

अब तो मुझे पूछ ही लेना चाहिए—

"क्यो भाई, कौन-सा स्टेशन है यह ?"

"गुरदासपुर ।"

"गुरुदासपुर ही आया अभी । पठानकोटसे चले दो-चार घण्टे हो गये भाई और अभी गुरुदासपुर ही···।"

"बाश्शा, एक कण्टा[९] हुवा है अबी तो··।"

चाय-गर्रम-चाय····दूध-मिठा-दूध

एक जैसी आवाज़ । यही गुरुदासपुरमे, यही भुसावलमे ।

टण्ण - टण्ण, टण्ण - टण्ण, टण्ण - टण्ण, टण्ण ··।

सात घण्टे । पाँच मिनिट और ।

अभी-अभी सुबह थी । अभी-अभी मै स्टेशन आया था । अभी-अभी मै ऊपरकी बर्थपर चढा था । अभी अभी मै कम्बल ओढ नीचे झाँक रहा था····

"क्यो भाई, कौन-सा स्टेशन आया ?"

"धारीवाल !"

....

"क्यो भाई, अब कौन-सा स्टेशन आया ?"

"बटाला···।"

....

"क्यो, अब कौनसा स्टेशन आया ?"

"कित्थे[१०] जाणा है बाश्शा ?"

"मुम्बई ।"

"वो दो दिण और दो रात बाद आयगा···"

दो दिन और दो रात !

टण्ण , टण्ण ।

दोके घण्टे । छोक्क-छक्क्-छक्क्···

छक्-छक्-छक्,

छक्छक्छक्छक्छक्छक् ··

होश सँभालनेपर यह मेरी पहली यात्रा है। वही भुसावलसे चालीसगाँव पहुँचानेवाली यात्रा। मुझे नही पता था कि अण्णा भी हमारे साथ ही बैठेंगे। मै तो समझे था कि वे एंजिन चलायेंगे और हम लोगोको भी अपने पास ही बैठा लेंगे। फिर रेल चलाते सब बाते समझाते जायेंगे कि रेल ऐसे चलती है, रेल ऐसे रुकती है। मै खिडकीके पास बैठा बाहर देख रहा हूँ। सीटी हुई, रेल चली और मेरे सवाल शुरू हो गये :

"अण्णा, ये रेल पटरीपर क्यो चलती है ?"

"अण्णा, ये पटरियाँ किसने डाली ?"

"अण्णा, रेल जंगलमे भी रुक सकती है क्या ?"

"अण्णा, ये डब्बा अपने घरसे भी अच्छा क्यो है ?"

मुझे अण्णा समझाते जा रहे है। अक्का[११] डब्बा-भर शकरपाले[१२] बनाकर लायी है, मै खाता जा रहा हूँ और पूछता जा रहा हूँ।

"अक्का, ये जंजीर कैसी है ? इससे रेल कैसे रुक सकती है ? ये ब्रेक क्या है ?"

"अक्का, हर डब्बेमे बाथरूम होता है क्या ? अपने यहाँ इतनी बडी वाडीमे भी दो ही क्यो है····?"

"अक्का, ये ऊपर सामान रखनेकी जगह है या सोनेकी ?"

"अक्का, इस रेलसे ये छक्-छक् आवाज़ क्यो होती है ?"

"अक्का बतलाती जा रही है और अण्णा दासबोध[१३] मे गुरु-शिष्य संवाद खोल बैठे है।

"क्यो अण्णा, दासबोधमे रेलके बारेमे भी कुछ लिखा है क्या ?"

अण्णा चश्मेको नाकपर नीचे उतारते ऐसे घूरकर देखते है कि मै डर जाता हूँ। मै खेल रहा होऊँ और अण्णा पूछ ले कि "काय चाल्ला

आहे ?"[१४] तो मुझे पसीना आ जाता है। मै रेल्के खेलसे अगर घर लौटता हूँ, मै स्लेट लेकर अगर बैठता हूँ, मै अगर रात चुपचाप दूध पी लेता हूँ, मैं अगर जल्दी जग जाता हूँ तो केवल अण्णाके डरसे, अण्णाके नाकपर उतरे चश्मेके डरसे।....

अब अण्णा आँखें मीचकर सो गये है। मैने एक और सवाल पूछा है—

"क्यो अक्का, ये रेल....ये रेल कभी...."

"रेल – रेल – रेल....सो जा।"

मैने आँखे बन्द कर ली हैं – रेल – रेल – रेल – रेल – मै अब खुद रेल हो गया हूँ—एंजिनकी तरह ठाठसे सीटी देता चल रहा हूँ—छक्-छक्-छक्-छक्-छक्-छक्-छक्....

अण्णाने मेरे सारे शरीरको जोरसे हिलाकर जगा दिया है—"ये क्या छक्-छक्, छक्-छक् लगा रखी है "

मै उठ बैठा हूँ। कहाँ ? मै कहाँ कर रहा था—छक्-छक्। यह तो चलती हुई ट्रेनकी आवाज़ है या फिर हो सकता है कि मेरे शरीरमे-से यह आवाज़ अपने-आप निकल रही हो।....

मै आँखें खोलकर देख रहा हूँ कि पंखा चल रहा है। यह अक्टूबरकी सर्दी और इसमे पंखेकी क्या ज़रूरत ! मेरा सारा शरीर टूट रहा है, मेरे पैर भर गये हैं, मेरी छातीके अन्दर ठूँस-ठूँसकर किसीने कफ भर दिया है। खाँसता हूँ तो एक ऐसी लकीर गलेमे खिचती है कि खिचती-खिचती ही चली जाती है—जैसे एजिनने मालगाडीको पुश दिया हो और एक हिलता-डुलता खड़ंग-खटर, खडग-खटर सारे डब्बोके पंजरको हिलाता चला जा रहा हो। मेरी एक-एक पसली गलेसे उठती खरोचको महसूस कर रही हैं। सारा शरीर ऐसा लग रहा है जैसे खूब दौडा होऊँ, खूब भीगा होऊँ, खूब पिटा होऊँ ओलोसे....।

कोई एक ट्रेन। आ रही है पठानकोटसे या नयी दिल्लीसे। भर दुप-हर या ऐन भिनसार या सई साँझ बी० टी० पर आ रुकती है। कुलियोकी भाग-दौड और उतरनेवालोकी जल्दीका कोलाहल फैल रहा है। एक कुली-ने सामान सिरपर रख लिया है और बीबीजी पर्स हिलाती आगे बढ रही है। एक बाबू खुद ही सामान उतार रहा है। आवाजें है, कई आवाजें है। आदमी खुद ही कितनी आवाज़ करता है और कहता यह है कि रेल छक्-छक्का शोर करती है—उलटा चोर! सारे डब्बे बातकी बातमे खाली हो गये है। कानके एक तरफ ऊपर उठा और एक तरफ गोल फैला टोप पहने एक सिपाही एक-एक डब्बेका नम्बर नोट करता उनके अन्दर झाँक-झाँककर देखता जा रहा है। उसे एक पिशवी अन्दर दिखाई देती है। उसे वह खोचता है बाहर तो एक गन्ध कहीसे आती लगती है। वह डब्बेके अन्दर घुसकर पाता है कि एक साहब अब भी ऊपरकी बर्थपर सोये हुए है। वह बुदबुदाता है, "रेल आये इतनी देर हो गयी और साहिब है कि ऐसे सोये है जैसे यह इनका घर ही हो। ऐ साहिब....साहिब!"—सिपाही सोये हुए साहबको हाथ पकड खीचता है कि लद्दसे उनका भारी हाथ उसके सिरपर आ गिरता है। सिपाही एक भद्दी गाली निकालता है मुँहसे, अपना होश ठीक करनेको होता है कि एंजिन डब्बोको धक्का दे देता है और सबको हिलाकर आगे बढनेवाले खडग खटर - खडग खटर - खडग खटरसे उसका सन्तुलन पल-भरको बिगडता है कि वे साहब जैसे हिलते है और भद्दसे उनका सारा शरीर पखेमे अटकता नीचे आ गिरता है। सिपाहीका सन्तुलन ठीक हुआ ही था कि वह चीख पडता है—"ला-ा-ा-श! वही खडग खटर - खड़ंग खटर एक लम्बी खिचिरिरिरके साथ सारे डब्बोको घसीटती है। सिपाही हक्का-बक्का नीचे कूद पडता है और अब जोरसे चिल्लाता है—"लाश है उस डब्बेमे।" फिर वही खडंग खटर - खडंग खटर और ट्रेन रुक जाती है। सारे कार्य-व्यस्त लोग काम छोडकर उस डब्बेकी तरफ दौड़ पड़ते हैं।

“ ···लाश ? लाश है····? किसकी लाश है यह··· ?”

चाहता हूँ कि इन प्रश्नोको सुनकर उठ बैठूँ और कहूँ कि यह मेरी लाश है ! मै अपनी मृत्युकी ऐसी ही कल्पना करता हूँ। वही अनवरत छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक् तेज़···तेज···और तेज होती जाये और मै कभी नही टूटनेवाली नीदमे सो जाऊँ ! जिस गोदने मुझे जन्म दिया उसी गोदमे अपने आखिरी वक्त भी सोऊँ ! ·····

नही, मै कुरलासे थोडा आगे तब नही मरना चाहता जब पूरीकी पूरी रेल पटरीपर-से उतर जाये।···

फिर नीचे झाँककर देख रहा हूँ कि सरदार साहब दाढीपर फिक्सो[१६] लगा रहे है। कैसी तेज़ सुगन्ध है इसमे ! दाढी खोलकर बाँधनेको है कि पुल आ गया है—खड-खड-खड़, खड-खड-खड···फिर मोड आ गया है और सरदार साहब गिरते-गिरते बचते है। मुझे हँसी आ रही है—इनपर थोडे ही, मै इनपर क्यो हँसने लगा ? हँस रहा हूँ ख़ुदपर।

टी-स्टॉलके सामने खड़े है हम तीनो। तीनोकी तीन अलग-अलग गेटपर ड्यूटी है। जाने कौन-सी ट्रेन आनेको है। मै बोला हूँ, लगता है साली मौत भी रेलमें ही होगी।····“मै बोलते बोल गया हूँ और वे दोनो बाते करने लगे है।

“बता, कैसे होगी स्सालेकी मौत ?”

“एक्सीडेण्टसे होगी।”

“ऐक्सीडेण्ट किस तरहका ? मालगाडीसे टकरायेगा यह या पैसेंजरसे ?”

“ये दोनो ही इसको मार नही सकती। इसकी सालेकी तो पूरीकी पूरी रेल लाइनमैनकी ग़लतीके कारण पटरीसे उतरेगी।”

“किस जगह ?”

उसने चायका प्याला रखते बडी शरारतसे उत्तर दिया है, "वही, कुरलासे थोडा आगे…!"

कुरला ?…हँस रहा हूँ खुदपर।

तय यह हुआ कि मै दुपहर एक बजे लोकलसे कुरला पहुँच जाऊँगा। आजके दिन मेरा रेस्ट है। फिर हम सान्ताक्रुज़ जायेगे और पैदल चलते जुहू पहुँचेगे। मै कुछ ऐसा काम-धाममे और रमी खेलनेमे जुटा हूँ कि एकके दो रामवाडीमे ही बज गये है, फिर लोकल पकडी है तो कुल दो घण्टे पन्द्रह मिनिट लेट हो गया हूँ। वह बेचारी कुरलाके प्लैटफॉर्मपर खडी-खडी बोर हो गयी है।

"क्या इन्तज़ार करवाया ! मै तो घर लौटनेवाली थी।"

"इसमे इन्तज़ारकी क्या बात है। फक्त दो घण्टे पन्द्रह मिनिट ही तो लेट हूँ।"

"कोई भी आदमी ऐसे लेट होता है क्या ?"

"मै आदमी थोडे ही हूँ…"

"फिर क्या है आप ?"

"बतला दूँ…?"

"हाँ।"

"मै हूँ…" जिज्ञासासे उसकी साँसे हराम हो रही है—"मै हूँ इण्डियन रेल्वे।"

वह उत्तर सुन हो-हो करके हँस दी है। उसकी हँसी रुकी है तो उसे और हँसानेको मैने पजा सीधा कर अँगूठा अपनी ठुड्डीपर, शेष चार उँगलियाँ नाकपर रख ली है और शुरू हो गया है छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्।

मुझे नही पता किसी औरको यह सुन हँसी आयेगी या नही, लेकिन

मेरे मनमे यह लतीफा इस तरह सँजोया हुआ है कि जब भी सामने आ जाता है मुझे गुदगुदी होने लगती है। काकाका वेड़ा मुलगा[१७] सुना रहा है

"एक गॉववालेको मनमाड जाना था। अब उसने आगगाडी कभी देखी नही थी, तो किसीसे पूछा कि भाऊ आगगाडी कैसी होती है। भाऊने समझा दिया – आगे एंजिन रहता है, उसमे-से धुँआ निकलता• है, एजिनका रंग काला रहता है और डब्बोका लाल। गाड़ी पटरीपर चलती है और आवाज़ करती जाती है। गाँववाला आगगाडी खोजने चला। उसे एक आदमी फुट-पटरीपर चलता हुआ दिखा। वह मुँहसे सिगरेट पीकर धुँआ छोड रहा था, काला कोट पहने था, लाल था उसका पैण्ट, और सिगरेट पीते-पीते खाँसता भी जा रहा था। गाँववाला समझा—हो-न-हो यही आगगाडी है! वह उसके पीछे हो लिया और एकदम उसके ऊपर लद गया···"इस लतीफेको सुनकर हम लोग खूब ताली बजा-बजाकर हँसते है···फिर मै खुद रेल बनता हूँ। अण्णाका काला कोट और उस मुलगेका लाल पैण्ट मैने पहना है। लम्बू काकाके पाससे एक बीड़ी चुरायी गयी है और उसका धुँआ छोडते मै रेल बन गया हूँ। उसी मुलगेने पूछा है, – "कसा वाटतो रे ?"[१८]

"मी त खरोचखर आग्गाडी झाला।"[१९]

सच, मुझे ऐसा लग रहा है कि मै रेल हो गया हूँ और जब इस अनवरत छक्-छक्, छक्-छक्के बीच लेटा हूँ तब भी वैसा ही महसूस कर रहा हूँ। महसूस कर रहा हूँ और हँस रहा हूँ खुदपर।

सरदार साहब पगड़ी भी बाँध चुके है और मेरी हँसी भी रुक गयी है। लोग सन्निपातमे हँसते है—अक्का भी हँस रही है, अक्काके सिरहाने बैठा हूँ मै—

"चल। ताबड़तौब चल रे, नाहीत ट्रेन चाल्ली जाणार।"[२०]··

ट्रेन कहाँ चली जायेगी—कही नही जायेगी ट्रेन अक्का····अण्णा ड्रायवर है, वे ले जायेंगे तभी तो ट्रेन जायेगी न। ·

अक्का हँस रही है—"तुझा करता मी डबा केला आहे रे· ·।[२१]

डब्बा ? मै खाना खा रहा हूँ और मुझे अक्काका डबा याद आ रहा है—खूब तूप-लावलेली पोली अनखिण वाग्याची भाजी ·।[२२]

मै विश्रामघाटसे लौट आया हूँ और मेरी इच्छा हो रही है यार्डमे पडे खाली डब्बेको देखनेकी।

जाने कैसे वह पता लगाकर आया है कि यार्डमे एक खाली डब्बा पडा है और वह डब्बा कभी कही नही जाता। हम सब यार्डमे तार पार करके घुस गये है। डब्बा नीचे ज़मीनपर ही रखा हुआ है। बाहर खूब धूल चढी हुई है और अन्दर भी बेहद गन्दा है। हम सबने डब्बेके अन्दर घुसकर देखा है। उसमे सीटे भी नही है, बिजली भी नही है, पंखा भी नही है। उसी मुलगेने बतलाया है कि यह मालगाडीका डब्बा है। मैने डब्बेको गौरसे देखा है· वह बडा दयावान लग रहा है, जैसे अपनोसे बिछुड गया हो, जैसे रास्ता भूल बैठा हो, जैसे उसकी अक्का मर गयी हो। मैने कई-कई बार उस डब्बेको देखा है और हर बार वह मुझे रोता हुआ दिखाई दिया है। उसी मुलगेने बतलाया है—"यह पटरीसे उतर गया है न इसीसे इसकी ये हालत हुई।" नही तो दूसरे डब्बे कैसे रँगेचँगे और जवान लगते है।' ··

मैने कई बार दु खके क्षणोमे बचपनकी उस अनुभूतिको दुहराया है। एक इस अन्धविश्वासने जड पकडी है मेरे मनमे कि पटरीसे उतरनेपर डब्बेकी-सी दशा बिगड जाती है जब भी मै भटका हूँ यार्डमे पड़े उस रोते हुए डब्बेकी स्मृति मुझे पटरीपर ही चलनेके लिए बल देती रहती है।····

उस डब्बेमे हमने खूब खेल खेले है। झाड़ू लाकर हमने उसकी

सफाई भी की है लेकिन उस सफाईसे वह साफ नही हुआ—वैसा ही रोता रहा है····'आज भी जब एक अच्छे डब्बेमे बैठा हूँ तो वह रोता हुआ डब्बा मेरे साथ-साथ चल रहा है। उसी डब्बेमें अक्का बैठी हैं। मैने झाड़ू लगाकर उस डब्बेकी शायद इसीलिए सफाई की है···

अब मै यह कह सकता हूँ कि अक्का बडो कजूस है। मुझसे जमाने-भरका काम करवा लेती है, फक्त एक पैसेका लालच देकर। उन्होने एक पिशवी बनवा रखी है लाल रगके कपडेकी। अण्णा एक बार ड्यूटीसे लौटे तो एक लाल झण्डी ले आये थे। बहुत दिनो तक तो हम उस झण्डी-का उपयोग रेल-रेल खेलनेमे करते रहे, फिर एक दिन अक्काको कुछ सूझा तो उसकी पिशवो सी डाली। मै तब तो नही समझा कि अक्का पिशवी किसलिए सी रही है लेकिन बादको समझ गया। वे बोली है—"यहाँ दिन-भर मेरा सिर खाता रहता है तो इन बच्चोके साथ तू भी चला जा यह पिशवी लेकर। देख सँभलकर जाना हो, रेल आये तो पटरीसे अलग हट जाना। उन रास्तोपर जितने भी कोयले पडे दिखे न, सब बीन लाना।"

मेरा कोयला बीननेका पहला दिन है। काकाका बेडा मुलगा और उसकी तीनो बहनें भी एक-एक पिशवी लिये है। मुझे इस काममे बडा मजा आ रहा है। पहले तो आते समय डर रहा था लेकिन पटरियोपर पहुँचकर मुझे ऐसा लग रहा है कि दुनियामे इससे बेहतर कोई और जगह हो ही नही सकती। मैने उन पटरियोको छू-छूकर देखा है, कैसी बराबर-बराबर दूर और दूर तक चली जाती हैं। मै काफी दूर तक उन पटरियोपर जाना चाहता हूँ यह देखने कि आखिर ये टकराती कहाँ हैं एक-दूसरीसे—और टकराये बिना कोई कैसे इतनी दूर चल सकता है?····काकाके उसी मुलगेने पटरीके ऊपर चलना सिखाया है। हम पाँव जमा-जमाकर चलते है और गिर-गिर पड़ते है बार-बार। इसीलिए तो रेलको पैर नही दिये

गये, उसमे पहिये बैठाये गये कि वह बार-बार गिर न जाये। हम पाँचो कोयला बीन रहे है। थोडे आगे एक छोटा-सा नाला है, नालेके इस तरफ खजूर और केले और जामुनके पेड है—जामुन पकी नही है, कच्ची है, हरी और सख्त। जब काकाके बेडे मुलगेने उस पुलको पार करनेकी बात कही तो मै घबरा गया हूँ। पुल ज़रा-सा है, यही कोई बारह-तेरह स्लीपर डले है उतनी दूरीमे, लेकिन नीचे पानी दिखता है बहता हुआ।

"उसपर खूब है कोयले।"

"नही, मुझे भीति[२३] लगती है। मै उस पार नही जाऊँगा"

"उस पार जब भुसावलका सिगल नही होता है ना, तो रेल रुकती है और इसी वास्ते खूब सारा कोयला वहाँ पडा मिलता है।"

मै डर रहा हूँ और वह मेरा हाथ पकडकर खीच रहा है। उसकी तीनो बहनें स्लीपरोपर बैठकर हाथ-पैर दोनोसे मेढककी तरह चलती हुई बीच पुलपर जा पहुँची है। मै सच रो दिया हूँ। रोते हुए बोला हूँ,—"नाही, माझाशी नाही चालल जातौ।"[२४] अब उसने मुझे एक थप्प जमा दिया है—"चल, चलतो नही गाढव!"[२५]

एक तो कोयले-भरी पिशवीका वज़न, ऊपरसे टपकते आँसू और सामने पुल! मैं हाथ और पैरसे काँपता हुआ आगे बढ रहा हूँ। नीचे पानी ऊपर आकाश—लग रहा है कि धम्मसे नीचे जा गिरूँगा। लेकिन दो-तीन स्लीपर पार करते हिम्मत बँध गयी है। वही मुलगा मुझे अब शाबाशी दे रहा है। पता नही पुल पार करके जातेमे कब मेरे आँसू सूख गये और कब मैं हँसने लगा। अब हम सब कोयलोके देशमे जा पहुँचे है। बीच पटरी लपक-लपककर हम बडे-बडे पत्थर-जैसे कोयले बीनकर अपनी-अपनी पिशवियोमे भर रहे है कि वह ज़ोरसे चिल्लाया है—"सिगल झाला।"[२६] मेरे लिए यह भी एक नया अनुभव है। तीनो लडकियाँ एकदम भागी है। मैं भी भागूँ लेकिन मुझसे अपनी पिशवी ही नही उठती। वह मुलगा लपककर नीचे उतर गया है और चिल्ला रहा है

वहाँसे, "लवकर ये रे।"[२७]....मैं उस पिशवीको उठानेकी फिर कोशिश करता हूँ लेकिन वह नही उठती। बीच पटरीपर पिशवी रखी है और दूरसे आवाज़ आ रही है ई—ई—ई—ई—ई....। सीटी सुनकर मेरा पसीना छूटने लगा है। जब उसने चिल्लाकर कहा है कि पिशवीको वही छोडकर आ जा तो मैं दौडा हूँ। पटरियोंके नीचे कितना उतार है, मेरे पैर फिसले जा रहे है। वे चारो जामुनके नीचे खडे चिल्ला रहे है—"लव-कर, लवकर ये रे।" और मैं अपने पैरोको साध रहा हूँ। आती आवाज़ तेज़ हो रही है—छक्–छक्–छक्–छक्–छक् – छक् – छक् – ....दूर रेलका धुँआ ऊपर उठता आ रहा है। इस एक खयालने कि कही अण्णा ही नही हो इस रेलमे, मुझे उस उतनी ऊँचाईसे नीचे फिसला दिया है। बातकी बातमे मैं भी जामुनके नीचे पहुँच गया हूँ। वे बच्चे खुश हो रहे है कि मैं नीचे उतर सका हूँ, "नाही तू मेला होता।"[२८] मेरी कोयले-भरी पिशवी वैसी ही रखी है और रेल नज़दीक आ गयी है—छक्–छक्–छक्–छक्–छक्–छक्–छक्...मेरी पिशवीको रेलने ढँक लिया है—डब्बे और डब्बे और डब्बे...इतने नज़दीकसे मैं रेलको कभी नही देख पाया था। उसकी तीनो बहनें आँखे बन्द किये खडी है। मेरी निगाह उस पिशवीवाली जगह है कि उसे कब इस छक् – छक्से मुक्ति मिलती है। पलक मारते रेल उसी छोटे-से पुलपर जा पहुँची है—खड – खड – खड – खड – खड – खड...और वह रही मेरी पिशवी—जैसी मैं छोड़ आया था वैसीकी वैसी ही रखी है।

मेरा सिरहाना पिशवी ही है न। उस दिन उस एक विचारने न बेग लेने दिया, न अटैची, न होल्डॉल। जो पिशवी हाथमे थी वही लेकर मैं पठानकोट आ गया।....पठानकोट ? और अब तो पठानकोट बहुत पीछे छूट गया है। अब मुझे फिर पूछ लेना चाहिए कि कहाँ आ गये हैं हम ? मैं कुछ नहीं जानना चाहता, मै तो केवल यह जानना चाहता हूँ कि कितनी जगह मैंने पीछे छोड दी है, मुझे कोई यह बता दे कि कितना समय

मैने पीछे छोड दिया है : मील-मीटर, घण्टे-मिनिटसे क्या लेना देना···!

"मै इस कम्बलको ओढे-ओढे, इस ऊपरकी बर्थसे नीचे झाँकते-झाँकते ही सुबहको शाम और पठानकोटको दिल्ली कर दूँगा। मेरी घडी तो स्थान है, जैसे . पठानकोट बजे सुबह हुई थी, दिल्ली बजे रात होगी। मेरी सारी उम्र भी वर्षोमे कहाँ कटी है एक-दो-तीन-चार····चौबीस-पच्चीस-छब्बीस····ऐसे थोडे ही बडा हुआ हूँ मै ! मैने एक अनवरत छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक् सुनी है और मै एक सालका हो गया हूँ, मै कोयले बीनने गया हूँ और मै पाँच सालका हो गया हूँ, मैने टेबिलपर रखी सगमरमरकी नग्न, अन्धी, कटे हाथोवाली लडकी देखी है और मैं पन्द्रहका हो गया हूँ, लोकलमे कुरलासे वह लडकी चढी है और मै बीसका हो गया हूँ। अनुभवको वर्षोसे कोई कैसे नापेगा ? सब इकाइयाँ हार जायेंगी···लेकिन यहाँ कम्बल ओढे, बर्थपर लेटा-लेटा मैं अपने यादके गज़-से सारी उम्रको नाप डालूँगा। कोई दो विचार यादोकी ज़रीब डाल-डाल-कर सर्वे करते रहेंगे और लाइनमैन नोट करता जायेगा—बीस अनुभव, छत्तीस यादें, एक सौ चार ख़याल···जिसके पास जितने अनुभव वह उतना जवान, जिसके पास जितनी यादें वह उतना वृद्ध, जिसके पास जितने ख़याल वह उतना दार्शनिक···

"थ्वाडा कम्बल फिर निच्चे गिर गया जी।"

मैं कम्बल ले रहा हूँ····कोई नाप दे इस दूरीको जिसे मैंने पलक झपकते पार किया है—मैं भुमावलसे आगे छोटे-से उस पुलके पार कोयले बीन रहा था न और अब मैं फिफ्टी-एट डाउन[२९] की ऊपरवाली बर्थपर लेटा हूँ····लेटा हूँ और सुन रहा हूँ·

छक् – छक् – छक्,

छक् – छक् – छक्,

छक्पक्छक्पक्छक्पक्छक्पक्छक्पक्···

ट्रेन रुक गयी है। ज़रा-सा प्लैटफॉर्म। न चाय न पूरियाँ। कोई ट्रेन पास होनेको है मैं नीचे झाँककर बाहर देख रहा हूँ। दूसरी ट्रेन आयी है और खडी हुई है। 'ह्विच कम्स आफ्टरवर्ड्स गोज़ फर्स्ट'''जो देरसे आती है वह पहले क्यो चली जाती है? पहले कैसे बात-बातपर मेरे मनमे सवाल उठते थे। इतने सवाल कि अण्णा और अक्का बोर हो जाते थे। सवाल और वे भी चलती ट्रेनमे'''। हमारी ट्रेन चल रही है लेकिन यह कैसे चल रही है, ह्विच कम्स फर्स्ट नेवर गोज़ फर्स्ट'''फिर यह हमारी ट्रेन कैसे चल दी? छक् – छक् – छक् – छक् – छक् – छक्, छक् – छक् – छक् ''' '''''

गरमीकी छुट्टियोमे मैं मामाके घर चालीसगाँव चला आया हूँ। अक्का और अण्णा दोनो भुसावल ही है। मै गणितमे फेल हो गया हूँ और मेरी सप्लीमेण्ट्री जुलाईमें है। खूब ज़ोरसे पानी बरस रहा है और मुझे लौटना है। भीड बहुत है फिर भी मै ऊपरकी बर्थपर चढ बैठा हूँ। गणित हाथमे और कॉपी-पेन्सिल साथमे। नीचे बडा हल्ला है, कोई एक बच्चा रो रहा है और उसकी माँ बच्चेको पीट रही है। एक बूढा आदमी माकडछाप[३०] दन्तमजनकी तारीफमे कोई गाना गा रहा है। ये सब तो ठीक, लेकिन इन सबके ऊपर वही अनवरत आवाज़ है छक् – छक् – छक्, छक् – छक् – छक्! – मन डिस्टर्ब हो रहा है। उस आवाज़के बीच कैसे सवाल लगाया जा सकता है? मै सवालमे उलझा हूँ और वह आवाज़ जैसे मेरे विचारोका ही अग बन गयी है। मै सायन्स पढता हूँ और टाईवाले सरने हम सबको बता रखा है कि आनेवाला युग यन्त्रयुग होगा। रेल-मोटर – हवाई जहाज़ – रॉकेटसे सारी दिशाएँ भर जायेगी। एक ऐसा समय आयेगा जब बहुत तेज़ खड – खड – खड, खड – खड – खडसे हमारे कान बहरे हो जायेंगे'''मेरे मनने सरके उन वाक्योसे एक तसवीर बनायी है। एक बहुत बडे जक्शनकी कल्पना मै किया करता हूँ

जहाँ अनगिनत पटरियाँ बिछी होगी, बेशुमार रेलें जिनपर चलेगी। वह जंक्शन ऐसा होगा जहाँसे दसो दिशाओमे रेले जायेगी—चाँद तक, सूरज तक रेले जायेगी, नीचे पाताल फोडकर रेल भूगर्भमे जा पहुँचेगी। ऐसे युगमें आवाज़ोकी हम शिकायत ही नही कर पायेगे। उन ज़ोर-ज़ोरकी आवाजोके बीच हम चिल्ला-चिल्लाकर बाते करेगे · अगर मेरे मनमे यह बात न होतो तो मै रामवाडीके 'ई' ब्लॉकके बरामदेमे डली खाटपर कैसे इतने वर्ष काटता, जहाँ शोरका ऐसा एक गड्डमड्ड लुढकता रहता है जिससे कानकी झिल्लियोपर हमेशा खरोचे बनती रहती है?···

अण्णाने जो स्टोव खरीदकर दिया है मुझे, उसमे सायलेन्सर लगा है? मैंने कई बार रेलोमे भी सायलेन्सर लग जानेकी बात सोची है लेकिन कहाँ-कहाँ सायलेन्सर लगवाऊँगा मै? चलती रेल बचपनमे देख मै दोनो कान बन्द कर लेता था, फिर कानको बन्द करता खोलता, खोलता बन्द करता और एक परेशान करनेवाली तेज़-धीमी छक्कुई – छक्कुई – छक्कुई – छक्कुई मेरा पीछा करने लगती थी।

··· अब तो मै यह सोचता हूँ कि रेल, स्टोव, जहाज़, रॉकेट इनमे किसी सायलेन्सरको आवश्यकता नही है, हाट-बाजारकी आवाज़को दबानेकी जरूरत नही है, इन सबके साथ तो आदमी ऐडजस्ट कर लेता है, इन आवाज़ोका तो वह आदी हो जाता है। जरूरत है उस सायलेन्सरकी जो आदमीके उस दिमागमे फिट किया जा सके जहाँसे शान्त-निश्शब्द रातमे भी कोई रेल छक् – छक् करती प्लैटफॉर्म छोडती है, जहाँ कई-कई सतलजोके पुल है, जहाँ कई-कई हावडा ब्रिज है, जहाँ एंजिनके लिए दो-चार एंजिन लगाने-जैसी चढाइयाँ है····

यही सोचते शिरसोली पहुँचते-पहुँचते मैने सवाल लगा लिया है। उसका उत्तर था—दो सौ बीस। पता नही दो सौ बीस रुपये थे, दो सौ बीस आदमी थे, अण्णाके दासबोधवाले बीस दशक, दोनशे समास थे या दो सौ बीस रेलें थी। उतने बडे जंक्शनपर दो सौ बीस रेले नही

होगी क्या ? तब एक साथ वे दो सौ बीस छक्-छक् कैसी लगेगी ?

कई बार ऐसा हुआ है कि मै आरामसे सोया होकर भी उठ बैठा हूँ और जगकर पता लगा है कि रेल किसी पुलपर-से गुज़र रही है या कही शहरसे दूर सिगनल नही होनेके कारण आहिस्ता-आहिस्ता रुक रही है। ऐसा भी हुआ है कि मै स्लीपरकी ड्यूटीपर हूँ, किसी यात्रीने किसी खास स्टेशन आनेपर जगानेके लिए कहा है, वह स्टेशन सबेरे चार-सवा चारके करीब आनेवाला है, मै ऊँघता-ऊँघता सोच रहा हूँ कि बस अब वह स्टेशन आनेको है ही और रेलकी धीमी होती आवाज़को बडी आत्मीयताके साथ मैंने अनुभव किया है। कहते है कुछ जानवर आवाज़ोके अभ्यस्त हो जाते है कोई आवाज उन्हे मुग्ध कर देती है, कोई आवाज उन्हे पागल बना देती है, कोई आवाज़ उनके मनमे विकर्षण पैदा कर देती है। कभी कोई वशी गूँजती है, कभी कोई बीन बजती है, कभी कोई तोप छूटती है और मै एक हिरन, एक सर्प, एक गौरैया बनकर उस आवाजके प्रति प्रतिक्रिया जाहिर करता हूँ। जैसे बाहर पानी बरस रहा हो और खिडकीसे लगा बैठा मै एक चलते हुए धुँधलकेको देख रहा होऊँ। काका सन्ध्याकाल बाडीके सामने मृदंग लेकर आ बैठे है और हम सबके सब एंजिन और डब्बे और ड्राइवर और गार्ड और स्टेशन मास्टर उस लम्बी मृदगको लिये बैठे लम्बू काकाके आसपास आ जमे है। मै उस मृदगको देखता आँखें बन्द कर लेता हूँ। काका मृदंगपर ऐसी उँगलियाँ घुमाते है कि एक तेज तिरकिट-धिन्ना, तिरकिट-धिन्ना हमारे कानोके एकदम नज़दीक बज उठती है। उसी तिरकिट-धिन्नाके पास एक स्टेशन बन जाता है—धिनतक-धिन्ना' 'एक रेल आ खडी होती है—धिरिनागि-धिरिनागि, धिरिनागि-धिरिनागि''''और काका धिन-तक-धिन्ना, धिन-तक-धिन्ना बजाते हुए शुरू कर देते है : "रेलको सिगनल दिख गया, हरी झण्डी हो गयी—छोक् – छोक् – छक्क – छक्''''

रेल स्पीडपर आ रही है—छक्-छक्, छक्-छक्, छक्-छक्, छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्-छक्, छक्छक्छक्छक्छक्छक्छक् रेलने स्पीड पकड ली है अब—छक्छक्छक्छक्छक्, छक्छक्छक्छक्छक्, छक्छक्छक्छक्छक्छ छक्छक्छक्छक्छक्·····।
अब रेल पुलपर-से गुज़र रही है—खड-खड-खड, खड-खड-खड, खड-खड-खड··· धिरकिट - धिरकिट, धिरकिट – धिरकिट, धिरकिट – धिन्ना ना ·।" मृदगका आकार जो रेखाओमे दिख रहा था अभी-अभी अब वह बिलकुल नही दिख रहा है। लहरके वृत्तोकी तरह कही अदृश्य हो गया है। लम्बू काकाके हिलते हुए बाल, कमेण्ट्रीमे बोलते हुए ओठ, पसीनेमे चिपका हुआ कुरतेका दाहिना हिस्सा, बहुत-बहुत तेज़ीके साथ नाचती हुई उँगलियाँ—ये सब जो कोयलेसे बने चित्रोकी तरह हलके भूरे उभरे थे, कही डूब जाते है। शेष है तो एक ट्रेन, फिर आवाज़ इतनी तेज हो जाती है कि यह ट्रेन भी किसी सुरगके अन्दर चलने लगती है और आवाजका साम्राज्य बजता रहता है—छक्छक्के राजा, छक्छक्के मन्त्री, छक्छक्की जनता। फिर मैने यह महसूस किया है कि नीचे डब्बेमे बडी भीड है, तिल रखनेको जगह नही है लेकिन मै पैर सिकोडकर किसी तरह सो रहा हूँ, मेरे पैरके पास किसीने बडा सन्दूक रख दिया है और मै ठीकसे सो नही पानेके कारण जग जाता हूँ··· देखता हूँ कि मै रामवाडीकी अपनी खाटपर ही लेटा हूँ और भाऊका कुत्ता पैताने आकर बैठ गया है। मै कुत्तेको तो लात मारकर भगा देता हूँ लेकिन वह छक्छक् गूँजती ही रहती है। मै पागलकी तरह उस आवाज़को खोजता हूँ लेकिन थक जाता हूँ···कही वह आवाज कस्तूरी तो नहीं है। कहते है न कि कस्तूरी मस्तिष्कमे भरी रहती है···?

भ्रम ही निकला। यह जो छक्-छक् हो रही है और मेरी ट्रेन चल रही है, वह न मेरी ट्रेनकी आवाज़ है और न मेरी ट्रेनका चलना है। यह तो सामनेवाली ट्रेन चल रही है। मै उलटकर दूसरी दिशामे देखता

हूँ तो पता चलता है कि ट्रेन खडी है और सरदार साहब प्लैटफॉर्मपर डब्बेसे उतर चहलकदमी करती लडकियोको देख रहे है…

मुझे नही पता कि वे दोनो पीछे खडे मुझे देख रहे है। मै ऐसे ही घूमता सोच रहा था कि पाँच तक यहाँसे फ्री हो गया तो लोकलपर उसकी प्रतीक्षा करूँगा। वह बससे यहाँ आती है कोई सवा पाँच बजे। उसकी मीठी-सी स्मृतिमे मैने अपनी दोनो हथेलियोका कमल बनाया है और जलते दीपसे उसके चेहरेमे खो गया हूँ। घूमकर देखा चार लडकियाँ एक-दूसरेके कन्धेपर हाथ रखे दुपट्टे उडाती आ रही है। कौन-सी फिल्म थी वह जो 'अलकार'मे घटी हुई दरोपर देखी थी – जिसमे चार लडकियाँ रेल बनकर जवानीकी रेलका गाना गाती है—और एक ये रेल आ रही है आगेकी तो तीनो एंजिन है, पीछेवाली एक ही डब्बा है साली। मै यह सोच ही रहा हूँ कि रेल मेरे सामने आ रुकी है—"विल यू प्लीज लेट अस नो…!" पूछा एंजिनने और डब्बा बीचमे कूद पडा—"लेट्स आस्क फ्रॉम इन्क्वाएरी…।" और रेल चली गयी। पीछेसे आकर उन दोनोने मेरे कन्धोपर हाथ रख दिये है—"ये रेल क्या पूछ रही थी ?"

"पूछनेका क्या सवाल है"—मैने हँसकर कहा है—"ये तो प्लैट-फॉर्म है। रेले आती-जाती रहती है।"

और आज इस समय जब मै दो दिन भी एक साथ एक जगह नही रह पा रहा हूँ अपने ईश्वरसे प्रार्थना कर रहा हूँ कि मै एकाध सप्ताहके लिए तो प्लैटफॉर्म बन जाऊँ।

अब चल रही है हमारी ट्रेन। सरदार साहब अब बैठ गये है। मै सोया हूँ सो सोया ही हूँ। अमृतसर आ गया तो आ गया, मुझे क्या करना अमृतसरसे। मै तो चाहता हूँ कि यह ट्रेन रुके ही नही। ट्रेन छक्-छक्,

छक्-छक् करती गुजर जाये और मुसाफिर प्लैटफॉर्मपर खडे-खडे परेशान हो जाये। ट्रेन सारे दिन, सारी रात चलती ही रहे—छक्-छक्-छक्, , छक्-छक्-छक्, छक्छक्छक्छक्छक्छक् ...

और वैसे ही चल भी तो रही है।

एक पूरा दिन। एक पूरी रात। रेस्ट नही मिलनेपर डाण्डी मारा हुआ दिन। नीद आनेपर ट्रेनमे बितायी गयी रात।....

सबेरे पाँच बजेसे फिफ्टी-एट डाउनमे नित्यकर्म और नहाना, कल्याण-से वी० टी० तक। सबेरे सात बजे ट्वेण्टी-सेवन अप[३१] मे चाय और नाश्ता, वी० टी० से कल्याण तक। बारह बजे सिक्स डाउन[३२] मे खाना, कल्याणसे वी० टी० तक। फिर शाम तक इस-उस गाडीकी अनलोडिंग एण्ट्री कर्नाक ब्रिज[३३] पर। शाम आठ बजे अप वन[३४] मे रातका खाना, वी० टी० से कल्याण तक। रात दस बजेसे सुबह तक सोना फिफ्टी-सेवन अप[३५] मे, कल्याणसे भुसावल तक।....फिर पैसेन्जरसे लौटना।

वी० टी० पर आवाज सुन पड रही है—फिफ्टी सेवन अप इज रेडी टु लीव द स्टेशन ऑन प्लैटफॉर्म नम्बर सो ऐण्ड सो ट्रेन नम्बर फिफ्टी सेवन अप प्लैटफॉर्म नम्बर इतक्या-इतक्यावर सुर्यनान आहे[३६] ..

मेरे लिए ये ही सूचनाएँ बदल जाती है, मुझे तो वह आवाज जैसे खाने और चायके लिए निमन्त्रित करती रहती है। जैसे माइक पुकारता रहता है—आओ भाऊ, आज हमारी ट्रेनमे सोओ। तुम्हारे लिए ऊपर-वाली एक बर्थ रिजर्व कर रखी है।..

मै इस तरह रहता हूँ यह अगर मैने किसीको नही लिखा तो अण्णा-को। अण्णाको तो मैने अपने पतेके लिए रामवाडीका वह नम्बर दे रखा है जिसके बरामदेमे मेरी खाट लगी है।....मुझे यदि घरकी कभी याद आती है तो उन्ही बचपनवाले खेलोके साथ, अक्काकी यादके साथ। या फिर उसके घर जब भी कुरला जाता हूँ और मेजपोशपर बैठे हुए खरगोशको

देखता हूँ तो यह जरूरत महसूस करता हूँ कि अपने पास भी एक खोली होनी चाहिए लेकिन सहसा पगडी[३७] का खयाल आ जाता है और लगता है जमा किया हुआ सारा रुपया सेठ पगडीके लिए छीन लेगा नही भाई····
सेण्ट्रल रेलवे जिन्दाबाद, पीले रगका फ्री पास जिन्दाबाद ···

मुझे फिर वही यार्डमे पडा खा-ली डब्बा याद आ जाता है, वही रोता हुआ डब्बा। मैने झाडू लगाकर साफ किया है····हम दोनो उसमे रहने आ-गये है मेरी खाट भी उसमे आ गयी है ···बीचमे टेबिल और उसपर खरगोशवाला मेजपोश एक तरफ स्टोव · उसमे लगा है सायलेन्सर सो कोई आवाज तो होती नही, और आवाज़से क्या होता है ? इस यन्त्रोके पानी बीच आवाज़ोसे नफरत करके कहाँ जायेंगे ? बस एक खारिज डब्बा मिल जाये तो उसे जुहूके किनारे लगा ले। उस डब्बेमे कभी दो बर्थ और होती ! ऊपरवालीपर मै सो जाता, लोअरपर वह, फिर तो खाटकी भी जरूरत नही रहती।

मै हर डब्बेको घर बसानेवाली आँखोसे देख रहा हूँ। इस सगीतमे ऐसे ही खयाल आते है। छक् - छक् - छक् - छक् - छक् - छक् - छक् - छक् - छक् और आवाजोके इस बहते पानीपर एक छोटी-सी नाव लकीर खीचती हुई तैर रही है 'वह नाव कभी एलीफेण्टा जानेवाले लाचकी तरह भड-भड करती है तो कभी कोई आवाज ही नही करती। एक तस-वीर बनकर रह जाती है—महज तसवीर····

और—

जब कभी फुरसतमे रहता हूँ मै, एक तसवीर बनानेकी कोशिश किया करता हूँ। तसवीर ···एक आदमीकी तसवीर। टाईवाले सरके घर गया हूँ मै, तो सामने टेबिलपर एक औरतकी मूर्ति मैने देखी है रखी हुई। वह पहनावेसे अर्धनग्न और आँखोसे अन्धी है। उसके दोनो हाथ कटे हुए है। संगमरमरकी वह मूर्ति मेरे मनपर कुछ इस तरहसे अक्स है कि न उसका

सफेद रंग मैला होता है न हाथ ही उगते है और न ही उसकी आँखोमे ज्योति लौटती है। वह अन्धी, अर्धनग्न, कटे हुए हाथोवाली गोरी लडकी कि-त-नी सुन्दर है। टेबिलके बीचोबीच चुप, बिलकुल चुप खडी है। सरने पूछा है, "तुम बना सकते हो ऐसी मूर्ति, उस आदमीकी, जो मशीनका आदमी होगा…" मैने क्या उत्तर दिया यह तो याद नही लेकिन यह ज़रूर याद है कि तबसे ही मै उस आदमीकी तसवीर बना रहा हूँ। उस तसवीरकी बात जब भी सोचता हूँ बैसाखीसे अपने शरीरको सन्तुलित किये अण्णा मेरे सामने आ खडे होते है—उनका रग काला है, सफेद तो उस कटे हुए हाथोवालीका ही है। अण्णाके कटे हुए पैरमे मै रेलका एक भारी पहिया लगा देता हूँ। उनके चौडे माथेपर मै बडा बैलेन्स ह्वील फिट कर देता हूँ जैसा टेबिल क्लॉकमे लगा रहता है, सिरपर एक जॉइण्ट रॉड कसकर ऊपरसे गुज़रनेवाले तार तक उसे ले जाता हूँ। मै अण्णाके शरीरपर वह रग पोत देता हूँ जो रेलके डब्बोपर पुता रहता है, फिर मैं उनके दिलसे एक पिस्टन-गियर लगाकर—शटाक् - शटशट, शटाक् - शटशटकी आवाज़ निकालता हूँ, बचपनसे मुझे यह आवाज बहुत प्रिय है। फिर अण्णाके पैर उठते है—छक-छक, छक् - छक् - छक् ·· फिर अण्णा सोचते है—टिक - टिक, टिक - टिक, टिक - टिक ··फिर अण्णा साँसे लेते है—शटाक - शटशट, शटाक - शटशट, शटाक - शटशट ·फिर दौडता हुआ जाता हूँ मैं सरके पास, "सर-सर, मैने मूर्ति बना ली।"

आँखे भी बन्द नही, कोई सपना भी नही, लेकिन अण्णा कैसे याद आय ? यह तो मेरी अपनी ट्रेन चल रही है, यह तो मेरे अपने डब्बेमे पीछेवाली बेंचपर बैठा साधु अपने चिमटेपर शटाक् - शटशट कर रहा है, यह तो वह बच्चा है जो फिरकिरी बजा रहा है···यहाँ सोया हूँ तो क्या हुआ, मै भी हूँ तो उतना ही बडा। यह कैसे देख रहा है ट्रेनको खुली-खुली आँखोसे, कोई इससे पूछे—

"क्या बनोगे तुम ? डॉक्टर या एंजिनीयर ?"

"मै तो स्टेशन मास्टर बनूँगा ।"

मै सबको यही बतलाता हूँ, लेकिन जिस दिन रेलके खेलमे दो रेलो-का ऐक्सिडेण्ट हुआ और सारे डब्बे खडाक् - भट्ट, खडाक् - भट्ट करते लुढक पडे उस दिनसे मैने स्टेशन मास्टर बननेका इरादा बदल दिया है। काकाका मुलगा कह रहा है कि ऐक्सिडेण्ट स्टेशन मास्टरकी गलतीसे हुआ है।

"क्या बननेकी सोचते हो तुम ? प्रोफेसर या वकील ?"

"मै तो एंजिन-ड्राइवर बनूँगा । मेरे अण्णा भी तो रेल चलाते है, मै भी वही चलाऊँगा ।"

मै सबको यही बतलाता कि मै वही बनूँगा जो मेरे अण्णा है लेकिन उस ऐक्सिडेण्टने मेरा मन बदल दिया जिससे मेरे अण्णाकी टॉग कुचल गयी। कौन जाने कि अण्णाकी टॉग टूटी और मेरे हाथ टूट जाये। कटे हुए हाथोवाला मै कैसा लगूँगा····ना, मेरा सारा शरीर कोई भले काट ले फक्त मेरे हाथोको छोड़ दे। हाथ न हो तो चलती ट्रेनमे चढे ही कैसे ? रेल बननेके लिए किसीके कन्धोपर हाथ ही कैसे रखे ?

नही, मुझे कुछ नही बनना। मै तो वह आदमी बनूँगा नीले कपड़ो-वाला, जो छोटे स्टेशनोपर हाथमे लालटेन लेकर रातके समय आती-जाती रेलोको सिगनल देता रहता है। मै रात-भर नही सोऊँगा, हमेशा जगता रहूँगा और कोई ऐक्सिडेण्ट नही होने दूँगा, फिर अण्णाका पैर नही कटेगा और उसके हाथ भी साबुत रहेगे। कैसी अच्छी लड़की है वह—सफेद, संगमरमर-जैसी और उसके दोनो हाथ कट गये—जाने कहाँकी रेलमे जाने किस ऐक्सीडेण्टसे हाथ कटे है उसके····एक तो कुहनीसे ऊपर तक कुछ बचा भी है और दूसरा तो जडसे कट गया है।····

तभीसे सोचता हूँ रेल छोटी ही होनी चाहिए।

वैसी रेल तो मैं अपने हाथोसे बना सकता हूँ। वही जो गवालियरसे मावशीके घर ले जाती है। कैसी छोटी-छोटी पटरियाँ, कैसा छोटा-सा एंजिन, कैसे छोटे-छोटे डब्बे....जाने किसने ये अरने भैसे-जैसी रेले बना दी, इनमे फटे गलेसे हो-ो-ो-ो करने-जैसी ह्विसिल जोड दी.. वैसी छोटी-छोटी रेले हिन्दुस्तान-भरमे चलती तो मजा रहता। और वह रेल चलती भी कितने धीमे है मै पैदल उससे तेज चल सकता हूँ। बस इतना याद है कि रेल चलनेपर मै लध्वो[३८] के लिए नीचे बैठा हूँ। कितना छोटा हूँ मै लेकिन आगे गये अपने डब्बेमे दौडकर चढ जाता हूँ—अण्णाने कैसे मुझे झेल लिया है। मेरे पास चाबीसे चलनेवाली मोटर है ना, वैसा ही खिलौना यह रेल है, किसीने प्लैटफार्मपर चाबी भर दी है, अब चाबी जब समाप्त होगी ना तो यह रेल रुक जायेगी ' मावशीका घर वही कही है जहाँ चाबी समाप्त होती है।...

चाबी समाप्त हो गयी है। जलन्धर आ गया है। मेरा बुखार अब कुछ उतरा है। अब पैर वैसे सख्त और भरे-भरे नही लग रहे है। सिर कुछ हलका हुआ है लेकिन नीद नही आयी है। कल सारी रात पठानकोट-मे जागता रहा हूँ। कोई एक ट्रेन दिमागके बैलेन्स ह्वीलपर स्टार्ट होती रही है, कोई एक एंजिन भुसावलके पासवाले पुलपर शण्टिग करता रहा है। शण्टिग करता एंजिन कैसा गधा लगता है—उसका मालिक उसे आगे हटाता है, फिर पीछे धकाता है, पीछे धकाता है, फिर आगे हटाता है। मुझे यह खेल लेकिन लगता भी अच्छा है। लगातार हो रही है—छक् - छक् - छक्, छक् - छक् - छक्, छक् - छक् - छक्...

और दुपहरमे कोई ट्रेन गुजर रही है। हमारा घर रेलवे लाइनसे थोडा-सा हटकर है। इस ट्रेनके आनेसे पहले हम सब इकट्ठे हो जाते है। काकाका बेडा मुलगा एंजिन बनता है, काले रंगका मोटा-मोटा है ना,

इसीसे। इस एक एजिनमे नौ डब्बे लगते है। काकाके मुलगेकी तीनो बहने भाईका कुरता पकड एक-दूसरेका फ्रॉक थामे तीन डब्बे खुद बना लेती है। उन तीनोके पीछे तीन बाल[३९] लगते है, ये खाली बनियान पहने है, फिर भी एक-दूसरेकी बनियानको काफी ऊपर तक खीचकर पकड लेते है। दो डब्बे डीलक्स है, ये प्रेस किये हुए अच्छे-अच्छे रगीन कपडे पहने है और कभी भी अपना बुश्शर्ट किसीको छूने नही देते। एक बार काफी चढाईपर ट्रेन जा रही थी तो एजिन पीछे लगा था। एंजिन साला एजिन ही था तो उसने डीलक्स डब्बेका बुश्शर्ट पकड लिया। इस बातको लेकर काफी झगडा हो गया था। एजिनकी उन दोनोंने पिटाई कर दी थी।' ' और मै गार्ड बाबूका डब्बा था, सबके पीछे। हरी-लाल झण्डियाँ मेरे हाथमे रहती और मैं जैसा कहता एजिन वैसा ही करता।··· हमारी रेल अपने कम्पाउण्डसे सामनेकी पटरियो तक चलती है यानी मुम्बईसे दिल्ली तक, दिल्लीसे मुम्बई वापस चली आती है। भुसावलमे हमारी ट्रेन खूब देर पडी रहती है, एजिन पानी लेता है, डब्बे चाय पीते है, गार्ड बाबू चेकिन करते है—हम जब रेल-रेल खेलते है तो हमारे शरीर रेल ही हो जाते है छक् - छक् - छक्, छक् - छक् - छक्··· बीच-बीचमे सीटियाँ ई - ई - ई, ई - ई - ई···रेल पुलपर-से गुजरती है खड - खड - खड, खड - खड - खड···कभी कोई डब्बा पटरीपर-से उतर जाता है—खडाक - खडाक - भट्ट, खडाक - भट्ट···एजिन फिर रुक जाता है और कभी आक्-छी करके भाप छोडता है, कभी शुँईय्य्य करके पानी फेकता है ··। कभी-कभी बाहरके कुछ और लडके हमारी गाडीमे आ जाते है तो दो रेले बन जाती है। एक रेल इधरसे जाती है और एक रेल उधरसे आती है। ऐसे समय मै स्टेशन मास्टर बन जाता हूँ। एक ट्रेन-को रोकता हूँ फिर दूसरीको पास होने देता हूँ। एक दिन मै ट्रेन आनेके समय सो गया हूँ और भयकर ऐक्सिडेण्ट हो गया है—एजिनसे एंजिन टकरा गये, डब्बे लड पडे, कुछ पटरीसे उतरे, कुछ उलट गये···किसी

मुसाफिरका हाथ टूटा, किसीका पैर कटा…

पैर ? अण्णाका दाहिना पैर काट डाला गया है। भयकर ऐक्सिडेण्ट हुआ है नासिक रोडसे आगे—एजिनसे एजिन टकरा गये, डब्बे लड पडे, कुछ पटरीसे उतरे, कुछ उलट गये 'अण्णा पैसेन्जरके ड्राइवर है, सामनेसे मालगाडी आ गयी है और वो भिडन्त हुई कि पूछो मत। अण्णा मेरे सिरपर हाथ फेरते कहते है कि टाँग ही टूटी यह क्या कम है, नही तो ड्राइवर कहाँ बचता है ऐसी भिडन्तमे। वे आँखो सामने घटा ऐक्सिडेण्ट सुना रहे है 'मी ब्रेक लाव्, लाव्, लाव् "कि ट्रेन माझा हाथातून गेली, मी पढरीनाथाचा स्मरण करू, करू, करू कि भिडन्त होऊनज गेली… काय दृश्य होता…च्च् ।'[४०] अण्णा उस दृश्यको आँखो सामने देखते गूँगे हो गये है, वे कह ही नही पाते है कि फिर क्या और कैसे हुआ, उनकी भाषा हार गयी है। मेरे सामने चीख-पुकार, रोने-धोनेका कोलाहल साकार हो गया है। मै सोचता हूँ कि अण्णाने कैसे ब्रेक लगानेकी कोशिश की होगी ' तब ब्रेक लगाते – लगाते – लगाते ही खडाक-भट्ट, खडाक-भट्ट हुआ होगा, और अण्णाकी टाँग कुचल गयी होगी। एजिन और डब्बोमे इतनी समझ तो होती ही नही कि वे ऐक्सिडेण्ट बचा दे। हम ही जब रेल बनते है न तो छक् छक् छक्, छक्-छक्-छक्के सामने भूल ही जाते है कि हम क्या है…फिर जब डब्बे खुलते है और शाम हो जाती है तो हम वापस लडके बन पाते है। अण्णा हमेशा बताया करते है कि मै सोते हुए भी रेल चलाया करता हूँ, कई बार इतनी ज़ोरसे सीटी बजाता हूँ कि अण्णा जगा देते है…मै जगता हूँ और सुनता हूँ कोई ट्रेन गुजर रही है छक् – छक् – छक्, छक् – छक् – छक् और सीटी गूँज रही है। मुझे फिर नीद आ जाती है।

काकाके वेडे मुलगेने ट्रेनकी सीटी ही बदल दी है। नये एजिनोकी ह्विसिल मुझे बिलकुल पसन्द नही। वह गलेको दबाकर ज़ोरसे बोलता

है—"हो-ो-ो-ो और एजिनकी यह फटी हुई आवाज़ कान फाड देती है····
ई – ई – ई – कितनी प्यारी आवाज़ है, कैसी बारीक···आती है तो आती हुई लगती है, जाती है तो जाती हुई लगती है—जैसे कपासके ढेरमे एक अकेली चिनगी हो ! कैसे तेजीसे लकीर खीचती हुई चलती चली जाती है फिर खो जाती है जैसे ट्रेन भाडली पहुँच गयी हो, वहाँतककी सीटी भुसावलमे सुन पडती है, मैने सोते हुए भी सुनी है ।

कभी मै एकमे एकको जोडकर ट्रेनकी बर्थपर सोते हुए काटी गयी रातोकी लम्बाई नापूँ तो मेरी उम्र सत्रह सालकी हो जाती है । एक चलती हुई गतिके कारण नीद-डूबा शरीर लगातार हिल रहा है, एक चलती हुई आवाज बगैर धुन बदले उसी तरह बढती जा रही है। धुन बदलती भी है—कभी पुलपर, कभी मोड़पर, कभी चढाईपर, कभी उतराईमे—लेकिन धुन अन्तरेमे जाकर जैसे फिर टेकपर लौट आती है । वही छक्-छक्-छक् दिनके उजेलेके साथ, वही छक्-छक्-छक् डब्बेमे फैले हुए ए-क-जैसे पीले उजेलेके साथ । कभी उस एक-जैसी आवाजसे सिरमे दर्द उभर आता है और कभी डब्बेके अपरिवर्तित रग और तख्तोसे नफरत होने लगती है—हर जगह एक-जैसी ट्रेन, एक-जैसा धुँआ । मगर मै इसकी ही क्या शिकायत करूँ, कोई मेरे बुश्शर्टको ही देखे—एकदम ट्रेनके रगकी तरह जाने कबसे पहने हूँ इसे ।·· वह तो बचपन था जब आवाज छक और पकसे बनी हुई लगती थी, अब तो वह ध्वनि जैसे मेरे दिमागमे फिक्स हो गयी है—छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक् । इस आवाजके तीनो काल भूत-भविष्य-वर्तमान एक-जैसे है । गिव, गेव, गिवन नही पर पुट-पुट-पुट जैसा । सरने सब समझा दिया है हमको । अँगरेजी-हिन्दी दोनो मैने सीखी है उनसे । उनकी वह तसवीर उतनी ही साफ है जितनी इस शीशेके पार दिख रही यह पहाडी···पहाडीके पाससे हमारी ट्रेन गुज़र रही है···

लगता है जैसे सर आगे-आगे एंजिन बने हो और हम आठवी कक्षाके सारे लडके उनका कुरता पकडकर एकके पीछे एक खडे हो। सर बडे गम्भीर आदमी है। न वे कभी हँसते है और न हमे ही कभी हँसने देते है, फिर भी मेरे मनमे उनको एंजिन बनानेकी कल्पना उठे बिना नही रहती। बस, उस दिनके बादसे तो सरको देखते ही मै मन-ही-मन बोलने लगता हूँ, छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक् ,···फिर जोरकी सीटी मार देता हूँ। ऐसा लगता है जैसे सर अब भी हिन्दी पढा रहे है।

"किसे कहते है चौपाई ?"

"जिसमे सोलह मात्राएँ · ।"

"चौपाई नही चौ-प-ई।" सर कानके ऊपरी हिस्सेको पकडकर ऐसे उमेठते है गोल-गोल जैसे उसे उखाड ही डालेगे।

"सर, चौपईमे पन्द्रह मात्राएँ होती है।"

"उदाहरण दो।" सरका डण्डा सिरपर टँगा हुआ है।

"तब की कहि न परत कछु बात। इक-इक पलक····।"

"भूल गये न ?" मै डरता हूँ कि सर अब डण्डा जमा देगे मगर सर नाराज नही होते है—"यह उदाहरण ज़रा है ही कठिन। इसकी जगह तुम चौपईका ये उदाहरण याद कर लो – आओ बच्चो खेले खेल। चलती है अब · ?"

"···अपनी रेल।" हम खुश होकर बोले है। वह दिनका दिन है कि मुझे सरको देखते ही चौपईकी याद आ जाती है और जाने कैसे मै ओठोके अन्दर मन-ही-मन छक्-छक्-छक् , छक्-छक्-छक् करता 'चलती है अब अपनी रेल···' गाने लगता हूँ। सर एंजिन है और हम सब लडके हो-हो करके हँसने लगे है। इस उदाहरणको मै बाथरूममे अब भी गा लेता हूँ। सरका गम्भीर चेहरा मेरे खयालमे आ जाता है अगर तो आँखो-पर पानी छीट-छीटकर मुँह धोने लगता हूँ।

तभी कोई धीरेसे पुकार लेता है—"वज़ीरासिंह !" मै नीचे झाँककर देखता हूँ लेकिन पाता हूँ किसीने किसीको नही पुकारा है। मै अपने-आपसे ही कहता हूँ – "पानी पिला दे।" ··मेरी वही स्थिति है, मै भी• वैसी ही कल्पनाओमे खोया हूँ, मेरी आँखो सामने भी वही वैसी ही रील चल रही है। लेकिन मुझे प्यास नही लगी है। मेरी प्यास तो यह जानना है कि मै कहाँ आ गया हूँ, कितने स्टेशन आगे आ गया हूँ, कितना वक्त हो गया है? भूख और प्यास और नीद और सपने और स्वाद ·ये सब तो पुरानी सदियोकी बाते है। मै फिर नीचे झाँककर पूछ रहा हूँ—

"क्यो बाबू, कौन-सा स्टेशन आया?"

मुझे कोई उत्तर नही दे रहा है। मै और नीचे झाँककर शीशेके पार-वाला भूगोल देखकर खुद ही यह अन्दाज लगा लेना चाहता हूँ कि मै कहाँ हूँ? बाहरकी ओर देखकर भी गुजरती जगहोको मै कोई नाम नही दे रहा हूँ। फिर पहलेकी तरह ही लेटकर बोलता हूँ – "वजीरासिंह, कौन-सा स्टेशन आया?"

लेकिन वज़ीरासिंह उत्तर नही देता, और उसे स्टेशनके बारेमे मालूम भी क्या? जिसके पैरोमे रेलके पहिये फिट हो, जिसके दिलसे धडकनकी जगह पिस्टन-गियरकी आवाज़ निकलती हो वह पानी भी नही पिला सकता।

देख लो उसे या मुझे ही देख लो—एक लगातार छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्के अलावा कुछ और भी नही सुन पडता है क्या? सामने कितनी बडी भीड है, बढती हुई भीड और उसपर मै व्वो व्वहाँ हूँ—

लोकल आयी है। एक धक्केमे अन्दर जा पहुँचे है। ट्रेन प्लैटफॉर्म छोडे इससे पहले ही ताश बँटने लगी है। कोई एक हाथोमे ताश लिये खडा है, कोई एक हिसाब कर रहा है। फकत चार डोलमे मस्जिद आ गयी है, ताश इकट्ठी कर ली गयी है और हम धक्केमे लग गये है उतरनेके

लिए। एक धक्का और बाहर······फिर हम पटरियाँ क्रॉस करते आगे चलते हैं, हमेशा इस पटरीपर डैकन क्वीन मिलती है, हम इधर एक तरफ हट जाते है और पीछेके दरवाजेसे अन्दर दाखिल—मै दूरसे ही देख लेता हूँ कि कितनी गाडियाँ खडी है······।

मै पिंजरेमे जाकर दस्तखत करता हूँ। एकदम पिजरा[४१] है साला! बैठे है और कार्बन लगाकर क्लियरेन्स तैयार कर रहे है। ऐसी ताबडतोब रहती है कि कब काम समाप्त करे और कब वी० टी० पहुँचे।

एंजिन दे रहा है गाडीको पुश—खडग-खटर, खडग-खटर, खडग-खटर···एक-दो-तीन·· सत्रह गाडी खोलनी हैं। पता नही कबतकके लिए यह अनलोडिग लिखा रहेगा भाग्यमे—इसे अण्णाने लिखा है मेरे भाग्य-मे···कुली, सीमेण्ट, थैले, बारदाने, खोके ··जब पूरा डब्बा खाली हो जाता है तो मुझे यार्डमें जमीनपर रोता हुआ वह डब्बा जरूर याद आता है।···सिरपर रूमाल बाँध लेता हूँ और मेरे रूमालपर सीमेण्टकी तहे जमने लगती है···

सेठ पिजरेसे बैठा-बैठा हम लोगोको दौडा रहा है और पूछ रहा है,

"गाडी आली?···गाडी खोल ली? सील तोड ली?···एण्ट्री घेतली?···ऑल क्लियरेन्स झाला?"[४२]···

दुबला धरा है सेठ। धोती-कुरता पहने यूँ ही रोब कसता रहता है···तबीयत होती है किसी दिन पिजरेमे-से अनलोडिगवाले पार्सलकी तरह उठाकर इसे शेडमे फेंक दूँ।···

आज रेस्ट नही मिला है और मैने डाण्डी[४३] मार दी है··

एण्ट्री लेनेमे घपला[४४] हो गया है और मै सारे दिन चेकिंग करता फिर रहा हूँ।···

तीन गाडियाँ इकट्ठी आ गयी है और ऐसी भाँगड[४५] मची है कि पगारके दिन भी शो नही जा सका हूँ··

डॉकसे क्रेन-द्वारा माल चढानेकी आवाज़ आ रही है, ऊँचे-ऊँचे झण्डे हिल रहे है। इस अनलोडिगकी जगह गोदी कर्मचारी ही होता तो समुद्रकी लाट[४६] को दिनरात चढते-उतरते तो देखता रहता। यहाँ तो इस जानलेवा आवाज़के अलावा कुछ नही।

शण्टिग हो रहा है और डब्बे शेडमे लग रहे है। किल्ली नहीं आयी है सीलवाले डब्बेकी लेकिन हम्मालने तालेपर हैमर दे मारा है। मै एण्ट्री ले रहा हूँ। क्या है इसमे ? क्या है जो इतने आहिस्ता इसे उठा रहे है ?···

"शेट्ट, गाडीके भीतर जाके चेकिन कर लो।"

मै अन्दर गया हूँ। एक पार्सल तोडकर कुलीने बोतल खोल ली है। हर कुली पियेला है—शेट्ट शारी गाडो अनलोड कर दी ··एक घूँट · अक्काके लिए झाड़ू लगाकर जो डब्बा साफ किया है उसी डब्बेमे एक तीखा घूँट···खडग-खटर, खडग-खटर······अबे स्साले अभीसे गाडीको क्यूँ पुश मारा ? एजिन अण्णा चला रहे है···एजिन चलानेमे टॉगकी जरूरत थोडे ही पडती है···तभी तो वे एजिन चलाने लगे है···

"हो गया ऑल क्लियरेन्स···?" सेठ पूछ रहा है।

"हो नही गया, कर दिया सेठ। चार घूँट रस[४८] था, सब किलीयर कर दिया···।" मेरे वाक्य पूरा करते ही ट्रेन चल पडी है—छोक-छोक-छोक, छाक-छाक-छाक, छाक-छाक-छाक, छक्-छक्-छक्,·· फिर पुल आ गया है, स्साला समुद्र खाडीमे घुसा आ रहा है···आ जा तू भी, सारी खाडीको हम कचरेसे भर देंगे, फिर उसके ऊपर ट्रेन चलायेंगे···छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्—। थोडी देर देखता हूँ मै खडा-का-खड़ा हूँ। न ट्रेन है कही, न छक्-छक्।

"नहीं अण्णा, मुझे आगे पढने दो। मेरे टाईवाले सर वज़ीफा दिलवा

देंगे, कह रहे थे पुणेंमे उनका भाई कॉलेजमे है।"

"नही।" अण्णा चश्मेको नाकपर नीचे उतारकर बोले हैं।

"तुम चले जाओ ट्रेनिगमे।"

मै खडा हूँ—ऐसे खडा हूँ जैसे सिगनलसे पहले कोई ट्रेन खड़ी हो।

"चले जाओ।"

सिगनल हो गया है।

"जाना ही ठीक होगा।"

टण्ण्, टण्ण्…। दोके घण्टे भी बज गये।

"बाप ड्राइवर, बेटा गुड्स क्लर्क!"

हरी झण्डी हिल रही है।

"जाओ अब।"

जोरसे ह्विसिल बज रही है। मै ट्रेनिगके लिए चल दिया हूँ। अण्णासे मैने एक बात भी नही कही और पहियोको लुढकने दिया—छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्……

सबसे मस्त है तो वह स्पोर्ट-शर्टवाला लडका। हो रहे है सब लोग उस ट्रेनिगमे बोर और वह बम्बई भाग गया है। दादरमे है उसका घर। मै पूछता हूँ उससे, "तुम क्या सोचकर आ गये यहाँ?" उसने जवाब दिया है, "गलतीसे आ गया हूँ, अब इस सण्डेको जा रहा हूँ तो लौटकर नही आऊँगा। वहाँ बम्बईमे छोटी-मोटी कोई भी नौकरी कर लूँगा।" इतना कहकर वह जेबसे कघा निकालकर बाल ठीक करने लगा है।—"लेकिन…" मुझे लेकिन कहते अण्णाका, अण्णाकी नाकपर उतरे चश्मेका खयाल हो आया है। कभी उनकी बैसाखीका खयाल, कभी उनके चश्मे-का खयाल।

मेरे सामने कोई लेकिन-फेकिन नही। जो नापसन्द है उसे झटककर अलग कर दिया और जो पसन्द है उसे दूसरेके मुँहसे भी छीन लिया…।

"अच्छा है भाई, घर जाओ शादी करो और बाप बनो।"

"नही भाई। दुनियाकी भीडमे कभी कोई लडकी मन-माफिक जँची तो उसके मना करते भी उससे शादी कर लेगे और नही तो" वह पैण्टकी पिछली जेबमें कघा रखते नाचने लगा है—

"डम डम डिग्गा डिग्गा····।"

वह सण्डेको सचमुच चला गया है। अच्छा लडका था "शायद हमेशा स्पोर्ट-शर्ट पहने रहता है न इसीसे ऐसा खिलाडी हो गया है, और एक मै हूँ कि अण्णाके अण्णाके अण्णाके अण्णाने जो पटरियाँ बिछायी थी उन्हीपर छक् - छक् कर रहा हूँ···"

लेकिन अण्णा नाकपर चश्मेको नीचे उतारकर मुझे घूर ही सकते है। अण्णा दासबोध ही पढ सकते है। अण्णा एंजिन चलाते टाँग ही कटवा सकते है। अण्णा मेरे अण्णा ही हो सकते है। "बस्स, इतनी ही बडी है उनकी उम्र। अण्णा सलाह दे सकते है कि साटोरीकी चासनीमें कितनी शक्कर होनी चाहिए। अण्णा भाजीमे मोठ[४१] नही है यह बतला सकते है।··· बस्स, यही उनके अनुभव समाप्त हो जाते है। उनके जीवनमे कुछ नही हुआ जिसे वे याद करे···उनके पास कोई अनुभव नही जिसे वे सुनाये— नौकरीपर गये और पगार ले आये, खाना बना और खा लिया, शादी की और बाप बन गये···। लेकिन मै ऐसा नही हूँ—मै जिस समय पीछेकी तरफ देखूँगा, मेरा सारा जीवन, मेरे जीवनका एक-एक वर्ष, एक-एक क्षण मुस्तैद सावधान खडा हो जायेगा। मै अपनी आँखोसे एक-एककी वर्दी चैक करूँगा। मै खुद उन सबको 'फॉल-इन' की आज्ञा दूँगा। मेरी उम्रका कोई भी वर्ष मर भले जाये लेकिन उसे परेड करते हुए मरना होगा। मेरे अनुभव दूध नही है जो फट जाये, मेरी उम्र बाजारकी मिठाई नही है जो उससे दुर्गन्ध छूटने लगे—या तो वह शीरा है या शराब···।

सहसा मै पसीना-पसीना हो गया हूँ। पखा बन्द कर दिया न और ऊपरसे मै कम्बल ओढे हूँ इसीसे ऐसी गरमी हो रही है। मैने कम्बल हटा दिया है, पखा चला लिया है और मै महसूस कर रहा हूँ कि गाडी वक्त कव्र कर रही है। कितनी तेज छक्-छक्, कितनी ज़ोरकी छक्-छक्···

जाने कहाँसे मै सहसा ऐसा उत्साही हो उठा हूँ! भाऊके ऊपरसे तार जोड-जोडकर बिजली ले आया हूँ। तीन-चार बल्ब लगा दिये है। सारी झाँकी मेरी बनायी हुई है। हम सब फिर दादर गये है गणपति खरीदने। बिलकुल बच्चे हो उठे है जैसे—गम्पति बब्बा मौर्या···गम्पति बब्बा मौर्या · लोकलकी पूरी एक सीट खाली कर दी गयी है—सारे गणपति बैठे है उसपर। ट्रेन चल रही है छकाछक-छकाछक और छकाछक एक नयी झांकी बनानेका विचार मेरे मनमे उभरा है।

···पटरियाँ बिछायी गयी है—रेलके डब्बे उसपर जमाये गये है—आसपास पेड खडे किये गये है—एक पुल बनाया गया है—पुलके नीचेसे पानी बहाया गया है—अब रेलमे चाबी भरी गयी है और मैने एक छोटे-से गणेशजीको रेलपर बैठा दिया है। बच्चोने तालियाँ बजायी है और रेल चल दी है—छक् - छक् - छक्, छक् - छक् - छक्···चूहा-सवार रेलपर बैठे है। रेलने बल खाया है और गणेशजी नीचे गिर गये है—सूँडके पासवाला एक दाँत टूट गया है···मै बडी शरारतसे हँस रहा हूँ—और लिखो मेरे नसीबमें रेल···और बना दो मुझे रेल···मै कोई तुम्हारी सूँडसे डरता हूँ···मै हर मोडपर तुम्हे नीचे गिराऊँगा···अण्णाके सूँड नही है मगर नाम तो यही है न ··उनके सूँड होती तो यह इण्डियन रेलवे उनके पेटमे कोयला भर देती और फिर उनकी सूँडसे धुँआ निकलता···रेल चल रही है छक् - छक् - छक्, छक् - छक् - छक् और सूँडसे निकल रहा है धुँआ : फक् - फक् - फक्, फक् - फक् - फक्···

मुम्बईको आज मै पहली बार ब-म-ब-ई बोला हूँ। पचास रुपये जब

मैने पगडीके दे दिये तो मीलो दूर कल्याणमे रामवाडीके बरामदेमे मेरे लिए एक खाट लगा दी गयी। किराया पाँच रुपये महीना, जो महीनेकी महीने देना ही होगा।

मै पहली रात उस खाटपर सोया हूँ, रस्सियाँ चुभ रही है। मेरे पास कुछ है भी तो नही, एक अँथरना और एक पाँधरना लेकर आया हूँ भुमावलसे। मच्छर इतने है कि जितने मारो उतने ही पैदा हो। रातको कुत्ता भी पैताने आ बैठा है। सोये-सोयेमे सोच रहा हूँ कि थर्ड क्लासकी ऊपरवाली बर्थ कितनी आरामदेह होती है—पंखा, लाइट नीचे बाथ-रूम···और यहाँ कुत्ता, मच्छर और···मै सबेरे देखता हूँ कि वाडीसे एक फर्लांग दूर पच्चीस-तीस मर्द-औरतोकी कतार लगी है। जाकर देखा तो पता लगा कि वहाँ वाडीके सेठने पाँच लैट्रिन बनवा दी है—कुछ देर लाइनमे खडा रहा और जनताकी बाते सुनता रहा फिर चल दिया—सीधा स्टेशन आ गया। पठानकोट-बम्बई कुछ लेट है। ट्रेनमे चढते-चढते महसूस करता हूँ कि ये सारी सुविधाएँ जैसे मेरे लिए ही बनायी गयी है। ट्रेनकी आवाजके बीच बैठा मै स्वस्थ अनुभव करने लगा हूँ-काका रोज सबेरे अर्धा तास[५२] घरके सामने बैठकर दाँतोपर गुडाकू[५३] मलते रहते है। अण्णाने बतलाया था कि इन्हे इसका व्यसन हो गया है, जब-तक गुडाकू नही मले इनका पेट साफ नही होता। अण्णाकी आदत सबेरे चहा पीनेकी है, और मेरी ? मुझे तो ट्रेनकी आवाज चाहिए और मुझे चहाकी जरूरत नही, गुडाकूको ज़रूरत नही। ··सबेरे कोई-न-कोई ट्रेन मिल ही जायेगी, पठानकोट जल्दी निकल गया तो हावडा मिल जायेगा।···

मै उठ बैठा हूँ। कन्धेसे सिर नीचे झुका है और देख रहा हूँ सबको। ऐसे बैठे हुए मै थक थोडे ही सकता हूँ। जो पहली बार ट्रेनमे बैठता होगा वह थकता होगा। मै तो अभ्यस्त हूँ इस सबका। ये न हो तो मुझे

नींद न आये, मेरा पेट साफ न हो, मुझे भूख न लगे। ट्रेन चल रही है तो ऐसा लग रहा है जैसे गरमीके दिनों कूलर लगा है कमरेमे। कैसी प्यारी ठण्डी हवा है—शीशेसे बाहर धूप कितनी मासूम है! अभी जलन्धरमे वह चुस्त कुरतेवाली लडकी कैसी संगमरमर-सी लग रही थी—उसके दोनो हाथ थे, दोनो साबूत हाथ, घडी बाँधे, अँगूठी पहने, मेहदी रचाये हाथ! लेकिन मैंने गौरसे देखा है—उसका कुरता ऐसे हाथोवालीके लिए सीया गया है जिसके हाथ कटे हुए हो! जब उसके हाथ है, दोनो हाथ है, फिर वह जाने क्यो स्लीवलैस कुरता पहने थी? शायद आजकलमे हाथ कटनेवाले हो ···होगे खैर···अपनेको तो केवल यह मालूम करना है कि अब कितने विचार-वर्ष जी लिये···? एक रातमे छह मास तो एक धार्मिक हीरोने भी जीये थे। द्वापरमे ट्रेन कहाँ चलती थी, नही तो तीर्थयात्रियोकी तरह वह भी एक रेल रिज़र्व करवा लेता। सोलह हज़ार और एक वह खुद···इतनी सवारियोके लिए तो सारी रेलोको जोड देना पडता। रहता मजा फिर······

कर्नाक ब्रिजके मनोरजन केन्द्रमे आजकी रात खूब मज़ा है। आज सास्कृतिक कार्यक्रम है। अनलोडिंगवालोने सोचा कि हम भी एक नाटक करे। मैंने नाटक लिखा है। मनोरजन केन्द्रके रगमचका परदा उठता है—एक होटल है, आठ कुरसियाँ और चार टेबिल। चार मर्द—एक पठान, एक सिक्ख, एक बंगाली और एक सीमान्तप्रदेशका रहनेवाला। चार औरते—एक मद्रासिन, एक कॉस्मोपॉलिटन, एक गुजरातिन और एक उत्तरप्रदेशीय ·। चाय पी जा रही है, डोशे - रसगुल्लेका झगडा हो रहा है और होटलका मालिक जनतासिंग सबको समझा रहा है। पठान कहता है, "पर बाश्शा, ये काजू-पिश्ता गुजरातिन शूरतशे कइसे आयी शेण्ट्रल रेल्वेके वो० टी० पे। ये तो वेश्टर्न रेल्वेका काजू-पिश्ता इई···।" अब इस नाटकको आउटसाइडर कोई कैसे समझे? बीचमे मै खुद बतला

देता हूँ माइकपर · "मर्द है—पठानकोट एक्सप्रेस, पंजाब मेल, हावडा मेल और फ्रण्टियर मेल। औरते है—जी० टी०, डेक्कन क्वीन, फ्लाइग रानी और वाराणसी एक्सप्रेस। होटलके मालिक जनता एक्सप्रेस।"···
···और तालियाँ बज रही है, लोग हँस रहे है। जनतासिगके कहनेपर सबमे सुलह हो गयी है और रंगमचपर रेलोकी रेल चल रही है—छक्-छाक-छोक, छक्-छक्-छोक, छक्-छक्-छाक्-छक कितनी बडी है रेल, जैसे सारे ब्रजको बैठाना हो इसमे! पर मै एस० एम० [५४] से कहूँगा कि इसमे सभी सो सके इतने स्लीपर नही है। देखता हूँ हावडा सबसे आगे है····

बात हावडा मेलकी है। कोई एक जोडा है। शायद शादी ताज़ी-ताजी हुई है—लडकी मखमलपर ज़रीके कामवाला सूट पहने है। सरदार साहब भी खूब अच्छी पगडी बाँधे, मुच्छें उठाये टिरेलिन पहने रोबमे है। मेरी ड्यूटी इसके टू-टायरमे है। उनको मैंने एक लोअर और एक अपर बर्थ दे रखी है। सरदार साहब दोनो लोअर चाहते है और जब मै दोनो लोअर उन्हे नही दे सका हूँ तो सामनेके लोअरवालेको उन्होने ऊपर जानेके लिए मनवा लिया है। मुझे क्या, मै क्यो माइण्ड करूँ? इगतपुरी आते-न-आते सब लोग सो गये है, मैने नाइट लैम्प ऑन कर दिया है। कुछ देर बाद मैंने देखा है कि उस जोडेने दोनो बर्थके बीच अपने ट्रंक और डब्बे रखकर डबलबैड लगा लिया है। एक मन तो हुआ कि उठकर उन्हे डाँट दूँ या समझा दूँ लेकिन उठता नही हूँ···बैठा बाहरके अँधेरेको देखता रहता हूँ। उस अनवरत आवाजके बीच।

कल्याणकी रामवाडीमे आज हमारी पहली रात है। पूरे जीवनमे बचपनको छोड खोलीमें मै बहुत कम सोया हूँ, सो यूँ ही अटपटा लग रहा है। एक खाट, ससुरालसे मिला बिस्तर और बीवी ··। खाट बहुत छोटी, बिस्तर कम रूईवाला और बीवी··· अँधेरेमे क्या दिखता है! सेठने बिजली भी नही दी है तबतक। बन्द खोलीमे मरे हुए चूहेकी

बदबू फैल रही है। या तो चूहेकी ही बदबू है या बीवीके सिरमे लगाये तेलकी। रात बडी तकलीफमे काट रहा हूँ। फिर सवेरे जब खोलीका दरवाजा खोलता हूँ और मुँह-हाथ धो लेता हूँ तब कही फ़्रेश अनुभव करता हूँ।

मै सुन रहा हूँ – छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्। इगतपुरीमे बिजली-का एंजिन छोडते ही आवाज बदल गयी है। सोच रहा हूँ लोग चलती ट्रेनमे भी बढिया बिस्तर लगा लेते है, बीवी और अपने ऊपर कम्बल डाल लेते है····

मै खट्से शीशा गिरा देता हूँ – लेट देम एन्जॉय यार !····

मेल लेट होता जा रहा है और पाचोरा जंक्शन पहुँचते ही दिन निकल आता है। वे दोनो चाय पी रहे है—आज मुझे टिरेलिनकी उपयोगिता मालूम हुई कि रात-भर कैसी भी करवटसे सो लो इसपर सल पडता ही नही।····

चाय मै भी पी रहा हूँ पर ऐसा लग रहा है जैसे चलती ट्रेनमें सोया हूँ, वही अनवरत छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्····सारा शरीर मृदगपर उठते काकाके धिन-तक-धिन्ना, धिन-तक-धिन्नाकी तरह हिल रहा है। मृदगकी चलती ट्रेनवाली यह आवाज़ अपने शरीरमे उस खोलीको खाटपर कैसे लाऊँ·······? इस ट्रेनकी बर्थपर उस खाटका ख़याल और उस खाटपर कभी मृदगकी याद, कभी चलती ट्रेनकी अनवरत छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्की इच्छा।

मै चाय पी चुका हूँ।··· फिर दूसरे दिन मै फोर्ट गया हूँ और बत्तीस रुपये पन्द्रह नये पैसेमे टिरेलिनका एक बुश्शर्ट ख़रीद लाया हूँ।

आज भी वही बुश्शर्ट पहने हूँ। पठानकोटमे जितने दिन रहा इसे ही पहने रहा हूँ। चाहूँ तो अभी इसे जाकर धो डालूँ और ट्रेन अगले स्टेशनपर रुके उससे पहले इसे वापस पहन भी लूँ लेकिन किसे दिखाना

है ! कुरला ही साफ कपडे पहनकर नही गये तो अब क्या शर्ट धोयेंगे। अपनी तो सफेद कोट पहने-पहने ही ज़िन्दगी कट जायेगी। ट्रेन इसी तरह छक्-छक्, छक्-छक् चलती रहेगी और पता लगेगा कि उम्र भी गुजर रही थी।····

इसे भी गुजरना ही कहेंगे क्योकि भाऊ भी रामवाडीमे ही रहता है और कह रहा है—"चल रहे हो क्या ?"

मै इनकार कर देता हूँ। पूछता है, "ड्यूटी है क्या ?"

मै उत्तर दे रहा हूँ, "नही; आज रातको मै नीद पूरी करना चाहता हूँ इसलिए साढे सात बजेवाली भुसावलमे सो रहा हूँ। भुसावल पहुँचते तक मेरी नीद पूरी हो जायेगी, फिर लौट आऊँगा।"

भाऊ हँस दिया है—"खाटकी रस्सियाँ चुभती होगी और ट्रेनकी बर्थमे गादियाँ लगी है। ऊपरसे फिरी ऑरकेस्ट्रा···।"

उसे मैंने लोकलमे बैठा दिया है और जो सोया हूँ ट्रेनमे तो ऐसे जैसे घोडे बेचकर सो रहा होऊँ। ट्रेन चल रही है सक्-सक्-मक्से आगे छक्-छक्-छक् तक और मेरे सिरके पास पखा घूम रहा है।

· ·ट्रेन कुरलामे रुक गयी है। वही सगमरमरवाली लडकी जो टाई-वाले सरके यहाँ टेबिलपर खडी थी, प्लैटफॉर्मपर मेरी प्रतीक्षा कर रही है। हम दोनो फिर गेट-वे ऑफ इण्डिया आ गये है। मै इसे 'दिलदार' कहता हूँ, खूब भीड रहती है और लोग आते-जाते रहते है। 'दार'[५५] मराठीका है दिलदारमे।' वह डबा बनाकर ले आयी है—रसभरी साटोरी और समोसे। लाँच पूरा भरा है, दिन-भर एलिफेण्टा रहेंगे, कल फिर सबेरे एण्ट्री लेंगे, पूरी एक गाडी खोलनी रह गयी है · सेठ स्साला डेमरेज लगायेगा – मै सोच रहा हूँ और लाँच चल दिया है – भड-भड, भड-भड, भड-भड, भड-भड··· हल्ला ट्रेनकी छक्-छक्का बाप है। हम दोनो ऊँचे गलेसे बाते कर रहे है जैसे रेडियोपर कभी-कभी हवाई जहाज-

वालोका वायरलेस नही लग जाता . आर यू गेटिग मी ···आर यू गेटिग मी····फिफ्टी-एट नॉट सेवन पॉइण्ट टू' बॉम्बे डेल्ही' येस बॉम्बे··· बॉम्बे-बॉम्बे

नीद पूरी कर भुमावलके पास ही जगता हूँ। रेल पुलपर-से गुजर रही है तो मेरी जगी हुई बन्द आँखोको दूरतक फैला अरब सागर और लाचसे काटे हुए पानीका रास्ता दिखता रहता है, कभी इस समुद्रपर यह रास्ता बनाका बना रह जाये' 'तबतक ही सही जबतक वह ऑफिस जानेके लिए कुरलासे वी० टी० आ जाये और बस पकड ले'' जिसे कल्याणमे खाना नही मिलता उसे बोरीबन्दरमे क्या मिलेगा ! अपने लिए तो रनिग रेस्तराँ खुला है। मै आते-जाते किसी भी ट्रेनके रेस्तराँमे खाना खा लेता हूँ, लोकलसे नही आता हूँ और वाराणसी एक्सप्रेससे आ जाता हूँ। रेस्तराँ बन्द होते-होते भी बढिया ऑमलेट और कटलेट तो मिल ही जाते है'' और नही तो एक घण्टेकी डाण्डी मारूँगा और पजाब मेलसे खाना खाता कर्नाक ब्रिज पहुँच जाऊँगा। स्साला कर्नाक ब्रिज ! अण्णा भी क्या जिद्दी आदमी है, बनवा दिया गुड्स क्लर्क ! खुलवाया करो अब जिन्दगी-भर मालगाडीके डब्बे' आती भी है यहाँ तो सिमेण्ट···हम्माल थैले उतारते रहते है, उतारते रहते है, और मै भूत बन जाता हूँ। जाना है कुरला और उतार रहे है शरीरपर से सीमेण्ट ! हटाओ भी, हावडामे बैठेगे, खाना खायेगे और उतर जायेगे कल्याण । खाना तो ढगका मिलेगा। ट्रेनमे खाना मिल जाये तो मै उस पगडीवाली खाटपर सो लेता हूँ और ट्रेनमे सोना मिल जाये तो भेल-पूरी[५६] से भी दिन निकाल लेता हूँ।

··· भाऊका कोई दोस्त आया है—इण्टरव्यूके चक्करमे। सोचता है मुम्बई भी देख ले। रमीमे मै उससे तीन सौ पॉइण्ट ज्यादा बना लेता हूँ। जीतकी खुशीमे मै उसे निमन्त्रित कर लेता हूँ—"साढे ग्यारह बजे मेरे साथ खाना खाना।"

"कहाँ ?"

"पजाबमेलमे···। ऐसा बढिया खाना मिलेगा कि तबीयत तर हो जायेगी···।"

हम दोनो खाना खा रहे है। वह कौर मुँहमे रखते पूछता है, "क्या तुम रोज इसी तरह खाना खाते हो ?"

"हाँ भाऊ," मै मजेमे मुँहका कौर चबाता कह रहा हूँ, "चल रही है रेल छक् - छक्, छक् - छक् और खा रहे है खाना···" रेल कटी हुई घाटीसे गुज़र रही है और मै उसे और लेनेके लिए आग्रह कर रहा हूँ जैसे यह मेरा घर हो। वैण्डरसे कह रहा हूँ,—"आण 'थोडी-सी भाजी····!"[३१] जैसे अक्का ही परोस रही हो !

"लेकिन रोज-रोज चलती ट्रेनमे खाना···?" उसने फिर पूछा है।

"खाना ही नही, सोना, नहाना और···" धीमेसे कहता हूँ—"पाखाना भी।"

अब वह खुलकर हँस दिया है—हँसी और ट्रेनकी चलती आवाज़ जैसे मृदगपर कोई द्रुत बजा रहा हो—धिरकिट - धिरकिट, धिरकिट-धिरकिट····

सहसा ट्रेनकी आवाज़ एक मीड लेकर तेज़ हो गयी है। कोई पुल फिर आया है—खड - खड - खड, खड - खड - खड ·····

सतलजका पुल है।

शीशेपर कैंचियोकी छाँहे तसवीरे बनाती जा रही है। हर छाँह आवाज़मे खो जाती है। और हर आवाज छाँह बनकर शीशेपर नाचने लगती है। मै नीचे उतर आया हूँ और खिडकीसे बाहर, पुलसे नीचे, रेतके आस-पास मेरी आँखे नदीको देख रही है। नदी भी चलती है और मै भी चल रहा हूँ लेकिन नदी पानी है और मै ट्रेन हूँ—एक ट्रेन जिसके पास ताकत है, गति है, ब्रेक है और एक नदी, जिसके पास मौज है,

मस्ती है, बहाव है....

यह बहुत ज़ोरकी आवाज मुझे हिलाये जा रही है—खड - खड - खड, खड - खड - खड, खड - खड - खड....यह आवाज़ चुकती ही नही, यह आवाज गुजरती ही नही... मेरे पास कितना बड़ा बचपन है लेकिन उसका कोई भी अंश अतीत नही हुआ। ऐसा एक दिन नही जो फ्लैशकी तरह चमके और मुझे चौकाये, ऐसा एक क्षण नही जो बीता हुआ कहलाये और उसपर मै आँसू बहाऊँ। वह सब वर्तमान है और मरा इतना अधिक निजी है जैसे पहलीको मिली हुई पगार हो। तब तो मै मिट्टी था . कोई हाथ मुझे रूप देता रहा है। यह रूप जो अब सतलजके पुलपरसे गुजर रहा है।

आखिरी कैंचीकी छाँह पीछे छूट गयी है और फिर मोड लेकर ट्रेन अपनी टेकपर लौट आयी है

छक् - छक् - छक्,
छक् - छक् - छक्,
छक्छक्छक्छक्छक्छक ..

भुसावल-मुम्बई पैसेंजर है। भाजीवाले सारे डब्बेमे फैले हुए है लेकिन पूरी बर्थपर अक्का सोयी है। बडी ज़ोर-जोरसे कराह रही है—पेटमे ऐसा दर्द है कि कोई चीज अन्दर चकरीकी तरह घूम रही है। ट्रेनकी लगातार छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक् और सहसा चौका देनेवाली ई-ई-ई-ई-जैसे आस-पास छूटती धरतीपर एक तीखी कलमसे वह आवाज लिखी जा रही है। ऐसा भी लगता है जैसे नदी—नाले—पहाड—टोले—मैदान—बंजर-खेत—खलिहान—पेड—पौधे—गाँव—प्लैटफॉर्म इन सबकी कोई डॉक्यूमेण्ट्री चल रही है और यह ट्रेनकी आवाज़ जैसे उसके साथकी कमेण्ट्री है—छक्-छक्-छक्, छक् छक्-छक् और फिर बारीक-सी ई-ई-ई, ई-ई-ई, जैसे रेल मेरे कानपर मुँह रखकर कानागोटी खिला रही हो। अण्णा बिलकुल सामने

बैठे अक्काके सिरपर हाथ फिरा रहे है, "बस अभी आता है चालीसगाँव। जलगाँव गया—शिरसोली, महसावड, माहेजी, परधाडे और पाचोरा" 'दो तासमे तो तुमको अस्पतालमे पहुँचा दूँगा ···।"

पुलपर-से ट्रेन गुजरती है तो आवाज दुगुनी हो जाती है—खड-खड-खड, खड-खड-खड" 'और सहसा यह आवाज हवाई जहाजके दूर जाने-सी कही दूर जाती धीमी और धीमी और धी–मी हो जाती है। सहसा अक्का-ने जोरसे "अग बाई"[५८] कहते बाये हाथके फैले हुए पजेको जोरसे छाती-पर मसलते हुए पैर हिलाये है। अण्णा घबरा गये है। साथके मुसाफिर एक सिरेपर हो गये है और डब्बेमे बैठी एक म्हातारी[५९] अक्काके पास आ गयी है, "घाबर नको सून।"[६०] लेकिन अक्का चीख रही है। मै अक्काके पेटमे बैठा अभिमन्युकी तरह ट्रेनकी एक-एक हरकत सुन रहा हूँ। वह माँ-के पेटमे रहते चक्रव्यूहमे घुसनेकी तरकीब सुन-सीख सकता है तो क्या मुझे छक् - छक् - छक् - छक् नही सुनाई दे सकती ?

और कहाँ तो मै अक्काके पेटके भीतर बैठा छक् - छक्, छक् - छक्-की धुनमे "अब मै आऊँगा, अब मै – आऊँगा, अब मै – आऊँगा, अब्मे दी – आऊँगा, अब्बे-आँगा, अब्बे-आँगा' " गा रहा था और सहमा ऐसा लगा जैमे किसीने लाइट ऑन कर दी है। अभी तो हलकी रोशनी फैल रही थी और अभी-अभी किसीने तेज मरकरी जला दी है। मेरी आँखे चौंधिया गयी है। मै उसी छक् - छक् - छक्, छक् - छक् - छक्के साथ जोरसे रो पडा हूँ—ल्याँ, ल्याँ, ल्याँ । ट्रेन फिर पुलपर-से गुजरी है, फिर खड-खड-खड, खड-खड-खड । कोई बडे-बडे चक्कोवाली गाडी मेरे सिर-के ऊपरसे उडी है और मै ट्रेनकी उस चलती आवाजके साथ और जोरसे लियाँअ – लियाँअ – लियाँअ करता उस पुलकी आवाजसे बाजी लगा रहा हूँ।

जब भी फॉर्म भरते कॉलम पूछता है—योर बर्थ प्लेस ?[६१] तो ट्रेन सीटी देकर प्लैटफॉर्म छोड देती है, भुसावलका प्लैटफॉर्म" 'और मेरी

कलम जलगाँवसे पाचोराके बीच छक् - छक्, छक् - छक् चलने लगती है। शिरसोली ···महसावड····माहेजी परधाडे 'कोई फिर पूछता है व्हिच इज योर बर्थ-प्लेस ? और मेरी उँगली एक सुबह, एक जंगल, एक पुल, एक चलती हुई ट्रेन, एक थर्ड क्लासके डब्बे, एक बर्थपर घूमकर रह जाती है । कैसा लगा होगा मेरी छोटी-छोटी आँखोंको पलक उघारते ही शीशेके पार गुजरते हुए दृश्योंको देखते ? कैसा लगा होगा मेरे छोटे-छोटे कानोंको एक अनन्त गूँजको बेधकर नजदीक आती लगातार छक् - छक्-को ग्रहण करते ? जिस थर्ड क्लासकी सख्त लकडीको मैंने जनमते ही महसूस किया वह कितनी अपनी-सी है'

मैंने कम्बलसे फिर अपने-आपको ढँक लिया है। ट्रेन धीमी होने लगी है। पूछूँ कि अब कौन-सा स्टेशन आयेगा, लेकिन पूछनेको मन नही ·· न यही सोचनेकी इच्छा है कि मैं वापस लौट रहा हूँ यूँ भी वापस तो मैं लौट ही नही सकता, वापस लौटनेका तरीका ही कहाँ मालूम मुझे······

ऊपरसे झुककर शीशेके पार देख रहा हूँ—फिर हरा ढलान, फिर कोई नदी, फिर कोई पुल सामने है······

नीद बडी देरसे खुल गयी है, सोच भी रहा हूँ कि कम्बल हटाऊँ, नीचे झाँकूँ और पूछूँ कि ट्रेन कहाँ आ गयी है अब, या अभी थोडी देर पहले किस स्टेशनपर रुकी थी ट्रेन ? लेकिन आँखे ठीकसे खुल नही रही है। यह बुख़ार उतरनेसे बादकी स्थिति है। खूब हलका-हलका तो लग रहा है लेकिन एकदम शक्तिहीन अनुभव कर रहा हूँ खुदको। शायद कोई स्वप्न चलता रहा है – कोई दो हाथ और छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्, कही खडी हुई चार भैसे और खड-खड-खड, खड-खड-खड, कोई

एक आदमी बैसाखीपर चलता हुआ और ई-ई-ई, ई-ई-ई- · कोई एक आकृति भी स्पष्ट नही हो पायी, कोई-सी एक आवाज भी मै साफ नही सुन पाया । मै ट्रेनमे लेटा हूँ और ट्रेन चल रही है—छक्-छक्-छक् , छक्-छक्-छक्-छक् । इस वर्तमानसे मै भी पूरी तरह कट पाता···और इसीलिए बार-बार यह जानना चाहता हूँ कि अब कौन-सा स्टेशन आ गया है· · कुरुक्षेत्र ।

सुबह होनेको है और गाडी कुरुक्षेत्रमे रुकी है। मै अर्जुनकी तरह बैठा हूँ रथके पिछले हिस्सेमे । मेरी ट्रेन खडी है, शायद इसी तरह कभी यहाँ दोनो सेनाओके बीच किसीका रथ खडा हुआ होगा।····ट्रेन चल दी है और चलती ट्रेन झपाटेके साथ एक अन्धा भिखारी डब्बेमे चढ आया है। मेरी आँखे उसकी आँखोपर ठहर गयी है और ऐसा लग रहा है जैसे अण्णा बाथरूममे है और नहाते-नहाते, बदनपर ठण्डा पानी डालते-डालते गीता बोल रहे है—धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सव. । मामका पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय ॥ प्रश्न पूछा जा रहा संजयसे । शीशेके पार वह कुरुक्षेत्र है। वो वहाँ महाभारतका युद्ध हुआ था—दृष्ट्वा तु पाण्डवानीक······

मैं हिल गया हूँ जैसे । वही अन्धा भिखारी खडा है मेरे सामने और ·· कुरुक्षेत्र गुजर रहा है मेरी आँखोके बाँयेसे ।

मैने आँखे बन्द कर ली है और ट्रेनने स्पीड पकड ली है .

छक्-छक्-छक्,

छक्-छक्-छक् ,

छकछकछकछकछकछक······

पानीपत ।

वह रहा पानीपत । एक युद्ध, दो युद्ध, तीन युद्ध । इनके बीचसे पेड कैसे उग आये···? कुरुक्षेत्रसे पानीपत तक कैसे हरे-हरे खेत लहरा रहे है । न इब्राहीम लोदी है न बाबर, न हेमू है न अकबर, न अब्दाली

है न सदाशिवराव भाऊ ··लेकिन यह अन्धा मेरे सामनेसे नही हट रहा है, अपनी गन्दी आँखोसे भीख माँग रहा है। मुझसे उसकी ओर देखा भी नही जा रहा है। मैने कम्बल खीचकर ओढ लिया है फिरमे। अन्धा। अन्धेके सौ बेटे। सौ बेटोकी अक्षौहिणी सेना। सब मेरे सिरहाने बैठे है। अण्णा नहाते-नहाते चौथे अध्यायके "इमं विवस्वते योग····" तक पहुँच गये है।

मैने एकदम अपने सिरको झटक दिया है और उठ बैठा हूँ।

ऊपरकी बर्थसे नीचे उतर आया हूँ, तो उतरतेमे पीठमे ऐसा बल आ गया है कि मुँहसे चीख ही निकल पडी है। अपने-आपको सँभालता मै खिडकी पकड लेता हूँ तो बाहर दिखाई देता है—नयी दिल्ली !

शोर उभर रहा है उतरने-चढनेवालोका और यही मै बैठे-बैठे नयी दिल्लीको देख रहा हूँ यह बस्ती नयी बसी है न, सो दिल्लीके साथ 'नयी' जोड दिया। पुरानी जहाँ है वही है—बीच सडक गन्दगी और फल काटे केलेके पेडकी तरह······

यह ट्रेनकी रात है, यानी डब्बेके अन्दर कुनमुनाता पीला उजेला फैल रहा है। जो भी डब्बेमें चढता है सोनेकी जगह ढूँढता है, जो भी डब्बेमे चढ गया है हाथ-पैर फैलाये हुए है "यात्री किस ढगसे बैठते है यही देखना काफी है चलती ट्रेनमे वक्त जाननेके लिए···लेकिन पता नही मेरा डब्बा कहाँसे कटकर कहाँ जा रहा है यह स्टेशन बीत गया, यह शायद यार्ड है, यह यार्डके बाहरकी जमीन है। शायद यह डब्बा किसी और डब्बेमे जुडा है—खडंग - खटर, खडग - खटर, खडग - खटर—ऐसा लग रहा है जैसे इस धक्केसे मेरी पीठका बल निकल गया है। मै उठ खडा होता हूँ तो नजर बाहर कही रुक जाती है—अभी ज़रा देरमे गुजर जायेगा यह। जब यह मेरी आँखो सामने है तब भी इसके गुज़र जानेकी बात ही मै सोच रहा हूँ—पहिये एक इंच भी आगे बढे न तो यह स्टेशन बीत जायेगा और फिर मै इस स्टेशनके बारेमे सोचूँगा। सोचना चाहे

जितना लम्बा हो सकता है लेकिन यह सही है कि मैं इस स्टेशनपर चन्द मिनिट ही रुका हूँ। वर्तमान बहुत छोटा और सँकरा है न, शायद इसीलिए हम बीते हुएमे जीवित रहना चाहते है। वह अन्धा ही अभी था, अब नही है, उतर गया। सहसा ट्रेन चल दी है छक् - छक् - छक्, छक् · छक् - छक्, छक् - छक् - छक्···

वह बिदाई मुझे खूब याद आती है। खूब इसलिए कि वैसी बिदाई मुझे कभी और कहीसे नही मिली। यूँ तो ऐसा भी हुआ है कि जब लोकलमे कुरलासे कल्याण जाने लगा हूँ तो वहाँ भी प्लैटफार्मपर रूमाल हिलाया गया है, आँखें पोछी गयी है, एक कोई हाथ उठा है, हिला है···और लोकलमे बैठे सब लोग खी-खीकर हँसे हैं। लेकिन उस बिदाईमे कुछ और रहता था, या तो गम्भीरता या फिर बचकानापन। लेकिन वह बिदाई अजीब थी, जिसमे मेरे सभी गुड्स-बन्धु[६२] इकट्ठा थे और था सेठ भी। मेरी नियुक्ति वी० टी० पर हो गयी। और सफेद कोट पहनकर जब मै वाकई टी० टी० ई० की तरह व्यवहार करने लगा····तो अण्णाके प्रति मेरे मनमे जो क्रोध था वह कुछ कम हुआ और मै अपने-आपपर कुछ अधिक ध्यान देने लगा। मैं खुश इसलिए था कि पिजरेसे, कर्नाक ब्रिजसे, अनलोडिगसे उस शेडवाले खडग-खटर, खडग-खटरसे मुक्ति मिल गयी थी मुझे, और मै अब किसी भी ट्रेनमे बैठने-उठने-सोने-खानेके लिए स्वतन्त्र था। ऐसी पार्टीका आइडिया जरूर भाऊने दिया होगा — भाऊ ही मेरी सब बातोको ठीकसे जानता था·· मुझे अन्त तक यह नही मालूम था कि ये लोग ऐसा करेंगे। मुझसे कहा गया कि मै शामको छह बजे वी० टी० पर ही रहूँ, कर्नाक ब्रिजसे तबतक सबकी छुट्टी भी हो जायेगी और फिर खूब खाना - वाना होगा। व लोग आये और मुझे वाराणसी-एक्सप्रेसमे बैठा लिया गया। ट्रेन चल रही थी, एक भारी लोहा लुढके जा रहा था और भाऊ खड़ा हो गया था—"मेरे प्यारे

गुड्स बन्धु, आज हमारे लिए सुख-दु ख दोनोका अवसर है कि हमारा प्यारा मित्र हमारे पिंजरेमें-से जा रहा है…" उसका यह पिंजरा शब्द सबको खूब हँसाता रहा था। वह बोलता गया—"अच्छा है कि हमारा मित्र यहाँके लोडिंग-अनलोडिंगसे मुक्ति पाकर टी० टी० बन गया है। हमारा फायदा यही है कि बिना पास भी अब हम ट्रैवल कर सकते है और स्लीपरमे जगह नही तो फिर भी घुस सकते हैं। यह पार्टी हमने चलती ट्रेनमे इसी वास्ते रखी कि इस हमारे रेल-जीवको यही सब पसन्द है। इसकी खुशोमे हमारी खुशो है और इसीलिए हम लोग जब चलती ट्रेनमे खाना खायेगे तो बडा मज़ा आयेगा। मेरी ईश्वरसे दो-चार प्रार्थनाएँ है कि इसके जीवनके खास-खास काम, जैसे शादी भी, चलती ट्रेनमे ही हो…" उसके इतना कहते ही सेठ ज़ोरसे हँस दिया था और मेरे गुड्स बन्धुने मुझे हार पहनाकर तालियाँ बजा दी थी। मैने खडे होकर सबको धन्यवाद दिया था और कहा था, "आप लोगोके प्यारको मै हमेशा याद रखूँगा। यह बिदाई एक पिंजरेसे दूसरे पिजरेमे चले जानेकी है। कर्नाक ब्रिजसे बी० टी० चला जाना पिंजरा बदलनेसे अधिक कुछ नही है। भाऊने जैसा कहा कि मेरे जीवनके खास-खास काम चलती ट्रेनमें ही हो तो मै भी चाहता यही हूँ। यदि शादी चलती ट्रेनमे न हो सके किसी कारण तो मै यह तो चाहता ही हूँ कि उसके बादवाली रात जरूर चलती ट्रेनमे ही कटे…" इस बातपर सेठने ताली बजा दी थी और मेरा मज़ाक उन तालियोमे खो गया था।…फिर ट्रेन पुलपर-से गुजर रही थी—खड-खड-खड, खड-खड-खड और हम सब रनिंग् रेस्तराँमे खाना खा रहे थे…

और मैने आज खाना ही नही खाया। डॉक्टरने भी यही कहा था कि फास्ट मार देना तो ठीक हो जाओगे। एक ज़माना था कि दिन-रात चरते रहते थे—सीग-चनेसे लगाकर साटोरी-समोसे तक। इस नोटिसकी

तरह चिपका हुआ था मैं—"यह रेल भारतीय जनताकी सम्पत्ति है···"
जैसे जहाँ ट्रेन जाती है वैसे ही यह नोटिस भी इसके साथ चला जाता
है न, ऐसे ही मैं भी था।···जब कुछ नही खरीदना होता है और हम
खाली जेब फोर्ट या क्रॉफर्ड मार्केटकी सजी हुई दुकाने देखते चलते है तो
केवल दर्शक होते है और जब कोई भी चीज खरीदनेके मूडमे होते है,
जेब भरी होती है तो हर घडी कलाईपर दिखाई देती है, हर जूता पैरमे
होता है, हर बुश्शर्ट हम पहने होते है ··

फरीदाबाद है शायद। शायद क्या, फरीदाबाद ही तो है—छक्-छक्-
छक्, छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्

मेरी जेब तो हमेशा खाली रही और एक दर्शककी तरह गुजरता
रहा मैं··फिर खाटपर लेटे हुए या ड्यूटीपर लगे हुए अपनी पसन्दकी
चीजोकी मैं याद करता—फोर्टकी सारी दुकानोको नये सिरेसे जमवा
देता—किताबोकी दुकानोको फिफ्टी-एट डाउनकी तरह प्लेटफॉर्म नम्बर
एकपर खडा करवा देता। नम्बर दोपर मिक्स अपको—उसमे मैं
होजियरीकी दुकानें लगवा देता फिर व्हिसिल बजाता, फिर दोनो ट्रेने
चलती—छाक्-छाक्, छाक्-छाक्, छाक्-छाक्····

जैसे खटका दबानेकी तरह काम होते थे सारे। एक मिनिट पहले कोई
चाय पी रहा था, कोई बाथरूममे था और ट्रेन आनेके मिनिट सब प्लेट-
फॉर्मपर थे। कही—कभी कोई झगडा नही, सबके डब्बे निश्चित, सबकी
जगहे निश्चित, सब-कुछ इतना अधिक तय, इतना अधिक निश्चित, इतना
अधिक पटरीपर था कि दूरसे देखनेपर आदमी आदमी नही मशीन लगता
था। शट्टसे ट्रेन आयी, फट्टसे बैठे, छक्कसे ट्रेन चली ··जैसे लिफ्टमे ऊपर
जातेमे रुकते समय एक हलका-सा मीठा गिराव जो होता है, वही महसूस
करते रहते थे हम हमेशा। वह दिन मुझे साफ और बिलकुल साफ याद
है। रामवाडीके ऊपर एक सफेद बादल था जो चल ही नही रहा था।

उमस बिलकुल नही था, शायद इसीसे सबके चेहरे ताज और खिले हुए लग रहे थे। रोजकी तरह मुझे ड्यूटीचार्ट लेने दस बजे वी० टी० जाना था। ट्रेन आयी और मैं गुड्स बन्धुओके साथ खडा रमीमे जुट गया। पहला डील ही चल रहा था कि कुरला आ गया। गेटपर दादर उतरने-वाले अभीसे धक्केमे लग गये थे। कुरलाका स्टॉप भी कितना छोटा था, तीस तक गिनती बोलो न बोलो कि ट्रेन चल दे। मेरे हाथमे सीक्वेन्स बन चुका था दो रानियाँ थी, फक्त एककी जरूरत थी कि तभी गेटके धक्केपर आवाज आयी—"प्लीज़ !" इतनी घिघियाती आवाज कि पूछो मत फिर आवाज़ कि "प्लीज हेल्प मी ·" मैं धक्केमे घुसा और उस लडकीको मैंने अन्दर ले लिया।

यह छोटी-सी घटना ऐसी तेज़ीसे हुई थी कि मुझे खुद मिल्क कॉलोनी-की चकरघन्न घूमती बोतलें याद आती रही। वह लडकी पसीना-पसीना हो गयी थी। उसके एक हाथमे लचका डब्बा था और दूसरेमे कोई फाइल। फाइलपर सुनहरी एम्बॉसिग थी—दो हाथ और बीचमे जलता दीपक।····वह दोनो चीजोको सँभालती हुई ऊपरका डण्डा पकड नही पा रही थी 'मैंने डब्बा उसके हाथसे ले लिया तो उसके चेहरेपर एक दीपक फिर जल आया। कौन नही समझेगा कि यह बम्बईकी नही है। बम्बईकी लडकी ट्रेनमें इस तरह नही चढती है, बम्बईकी लडकी घिघियाकर प्लीज़-प्लीज नही करती है····

"आप लेडीजमे क्यो नही चढ गयी ···?"

"उसमे और भी ज्यादा भीड थी।"

"तब फर्स्ट क्लासमे चढ जाती ?"

"मेरे पास पास तो थर्ड क्लासका है।"

"तो क्या हो गया '' लोकलमे कही रोज चेकिग होता है।"

"लेकिन मेरे दोनो हाथ तो एगेज्ड थे—एकमे डब्बा, दूसरेमे फाइल ···।"

"इन दोनोको थैलीमे रखा कीजिए और एक हाथको खुला छोडा कीजिए "

"कि वक्त-ज़रूरत काम आया करे...."

भाऊने शो करते कहा था। यह सब कैसे हो गया कि मेरे पत्ते दूसरे-ने ले लिये और इतनी देरमे भाऊने शो भी कर दिया । मुझे कुछ-कुछ याद है—दोनो बाते हो सकती है—या तो मैने उस लडकीको ट्रेनमे चढाते समय ताश दोस्तको दे दिये थे या फिर उस दोस्तने खुद ही ताश मेरे हाथसे ले लिये थे। इतना भी याद है मुझे कि एक क्वीनकी जरूरत थी या फिर एक जोकर ही आ जाता ...जोकर तो भाऊ था। ..जाने कब दादर-फादर सब निकल गये और ट्रेन वी० टी० पहुँच गयी थी। मेरे गुड्सवाले दोस्त मस्जिदपर ही उतर गये थे, डेकन क्वीन लेट थी और रामवाडीवाला बादलका टुकडा उस समय दूर तक नही दीख रहा था।

वह उतरनेकी बडी जल्दीमें थी। बोली—"मुझे बस पकडनी है ... नही तो ऑफिसमे देर हो जायेगी " मै कुछ कहूँ-कहूँ कि वह सारे क्यू-के आगे पहुँच प्लेटफॉर्मसे बाहर जा सीढियाँ नीचे उतर गयी थी।

मैं सोच रहा था वह कैसी साडी पहने थी ? ब्लाउजका रग कैसा था ? बालोमे वेणी लगाये थी ? पता नही महाराष्ट्रियन है या और कोई ? गालकी हड्डियाँ याद है, उनपर पसीना चमक रहा था, आँखे फैली हुई थी। हाँ, ब्लाउज़ बन्द गलेका था .. पुणे साइडकी होगी....पुणेमे होती है ऐसी लडकियाँ ? दोनो हाथ एगेज्ड थे.. हाथ थे तो 'एक वह सरके यहाँ देखी थी मूर्ति, कैसी सगमरमरकी थी—सफेद बिलकुल, इस लडकी-के रंग-जैसा रग। फर्क यही कि इसके दोनो हाथ है और उसके दोनो हाथ कटे हुए थे हाथ ? उसकी फाइलपर भी तो हाथ बने थे, दोनो हाथोके बीच एक चेहरा, चेहरा नही दीपक था, जलता हुआ दीपक।
तब कही मेरी आँखें प्लेटफॉर्मकी सीढियोपर चढी, ह्वीलरके पास घूमी, टी० सी० का चक्कर काटा और अन्दर फिर लोकलके पास आयी तो

देखा क्या कि उसका डब्बा मेरे हाथमे ही है। कैसी जल्दीमे थी यह लडकी कि डब्बा मेरे पास ही छोड गयी। मै लगभग दौडा और स्टॉपपर पहुँचा लेकिन वहाँकी क्यू मे वह लडकी नही थी। एक डबलडेकर ज़रूर जाती हुई दिखाई दी—शायद उसमे ही गयी थी वह, ऊपर बैठी थी एक कोई लडकी ऊपर बैठी हुई दिखाई दी थी···

तब मै कर भी क्या सकता था।····

ट्रेन चल रही है—छक् - छक् - छक्, छक् - छक् - छक्, छक् - छक् -छक्···सब सो रहे हैं, मथुरा निकल गया है और मै ऊपरसे नीचे झाँक रहा हूँ। एक गोल, साफ मँजा हुआ, ऊँचे हैण्डिलवाला डब्बा। मैंने उसे खोल लिया था—तीन छोटी-छोटी भाकर[६३] और नीबूका अचार, एक पुडियामे नमक···मैंने एक भाकरको देखा, गौरसे देखा—मेरी अक्का रोटियाँ रखती थी और उनपर खूब घी लगाती थी, उतना जितना मुझे पसन्द था और ये सूखी भाकर, नीबूके अचारकी एक फोड, एक उर्दू लिखे कागज़मे बँधा नमक··। मै कभी भी इन तीनो चीजोको भूल ही नही सका हूँ।

"तुम भी यार अजीब हो। कह रहे थे अपना तो सारा काम ट्रेनमे होता है और ले आये डब्बा···।"

"कुछ नही यार, ऐसे ही···" मुझे डर लग रहा था कि यह कही डब्बेमे रखी भाकर और अचार और नमक न देख ले मैंने उस डब्बेको अपने पीछे कर लिया और ड्यूटीकी बात करने लगा।

वह जब चला गया तो मैंने फिर डब्बा खोला—एक-एक भाकर निकाली—मेरे एक हाथमे भाकर, दूसरा हाथ उसे तोडता हुआ—दोनोके बीच उस भाकरका रूखापन। हर भाकरपर एक दीपक बार-बार जलता रहा। दो कौर खाते मेरा गला ऐसा सूख गया कि ज़ोरकी खाँसी आ गयी और मैंने दौडकर पानी पीया। फिर एक ग्लास पानी लेकर एक-एक

घूँटके साथ मैने तीनो भाकर खा डाली—डब्बा उर्दूके उसी कागजसे साफ कर दिया और एक डकार ली। तबतक मै सब-कुछ भूल चुका था····केवल वह श्रम याद रहा जो एक-एक सूखे कौरको गलेसे नीचे-उतारते लगा था और उसके साथ ही गालकी हड्डीपर चमकता पसीना साफ मजे हुए डब्बेपर चमकता दिखता रहा।

सहसा कोई जगकर बैठ गया है और पूछने लगा है—"बाश्शा, आगरा निकल गया···· ··?"

"नही।" मै धीमी आवाजमे कह रहा हूँ।

अभी नही गुजरा और अभी-अभी गुज़र जायेगा, कितनी देर लगती है किसी भी शहरको गुज़र जानेमे ? यह ट्रेन आगे बढती रहेगी छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक्····और हम सोये हो चाहे जगते हो, हमारे सोने-जागनेसे कही कोई फर्क नही पडता। ट्रेन चलती है तो चलती ही रहती है।

मै सोचमे डूब गया हूँ।

"आप ? आप्प है ?"

उसे जैसे मुझे पहचाननेमे इतनी देर लगी। मै सफेद कोट-पैण्ट पहने हैट लगाये गेटपर खडा था। उसके चौककर मुझे देखनेको देख मै केवल मुसकराया-भर था।

"आपका डब्बा।" मैने डब्बा लौटा दिया। वह डब्बा लेनेमे परेशान हो गयी थी जैसे। डब्बा ले तो लिया लेकिन चुप ही बनी रही।

"उस समय आप इतनी जल्दीमे थी कि बगैर डब्बा लिये चली गयी। सारे दिन उपवास करना पडा होगा।"

"नही, मैने वहाँ खाना खा लिया था। लेकिन मै परेशान रही कि इस डब्बेसे आपको परेशानी हुई होगी····।"

"परेशानी क्या ? मैने डब्बा सँभालकर रख दिया था और अब

यहाँ ले आया कि आपको दे दूँ।"

"तो आपने नही खोला इसे ?"

"क्यो खोलता ? आपका डब्बा, आपका खाना···और···" मेरे इस कहनेसे वह एकदम स्वस्थ हो गयी थी, उसे विश्वास हो गया था कि मैने उसकी सूखी भाकर नही देखी है···लेकिन उसे देख मै बडी देर तक सोचता रहा कि यह वे सूखे कौर कैसे उतारती होगी गलेसे नीचे···? काली किनारका दण्डिया···सफेद पाइपिगवाला ब्लाउज, दो काली क्लिपे और चार चूडियाँ · बस, और कुछ भी नही था उसके शरीर-पर·· ·उस सगमरमरकी मूर्तिके शरीरपर भी कुछ नही था··· ।

"यही ट्रेन जायेगी ?"

"हाँ।"

उसकी निगाह ट्रेन छूटनेवाली घडीसे वक्त बतानेवाली घडीपर गयी और वह जाकर खिडकीके किनारे बैठ गयी। वह लगातार मेरी तरफ नही, कही और देख रही थी उसे नही लग रहा होगा कि आज उसके जीवनमे एक बडी घटना हो गयी है।····शायद लग रहा होगा ? लेकिन मेरे बाल तो नही देखे होगे उसने · ? मेरे बाल इतनी कम उम्रमे खिचडी हो गये है कि मै चाहता हूँ ये तेज़ीसे सफेद हो जायें। अच्छा रहे फिर-सफेद कोट, सफेद पैण्ट और सफेद बाल ·। अण्णाने काकासे पूछकर कई बार दवाइयाँ बतलायी है लेकिन मैने एक दवाई भी नही की।

अण्णाको मन-ही-मन जवाब देता था मै—गुड्सक्लर्क हूँ मै तो। पहले-से ही बाल सफेद हो रहे है यह अच्छी ही बात है। वहाँ तो जो जायेगा उसीके बाल सफेद हो जायेगे। · उस समय ···तो जल्दीमे वह मुझे ठीकसे देख नही पायी होगी और अब तो मै हैट लगाये हूँ।

ट्रेनने सीटी दी और स्टेशन छोड दिया। खिडकीसे बाहर झाँककर एक मुसकानने मेरी तरफ देखा। मैने हाथ हिला दिये थे लेकिन उसने

हाथ नही उठाये थे – दोनो हाथ एगेज्ड जो थे।…

ट्रेन चल रही थी और चली गयी थी। मैं अब भी उस बीती हुई मुसकानको याद कर सकता हूँ। करना यह होगा कि जेबसे रूमाल निकाल-कर उस मुसकानपर जमी हुई धूल झाडनी होगी। इतने बरसोमे उसपर बहुत धूल जम गयी है – कुरलाकी धूल, कल्याणकी धूल…

धूल झाडनेके लिए मेरे पास सारी रात है। सारी रात इसलिए कि दिन-भर सोया हूँ। अब सब सोये है इस डब्बेमें और केवल मै जगा हूँ। ट्रेन अच्छी स्पीडमे है। डब्बेका कुनमुनाता पीला बीमार उजेला और मै—हम दोनो बैठे है शेष सब सोये है। रातके अँधेरे और अँधेरेमे सोये जंगल-को चीरकर चलती हुई ट्रेन यूँ भी अधिक ध्वनिमय लगती है।

छक्-छक्-छक्,

छक्-छक्-छक्,

छक्छक्छक्छक्छक्छक्…

मै ट्रेनमे बैठा हूँ और एक और ट्रेन मेरे दिमागमे स्पीडपर है। मै कम्बल ओढ लेता हूँ। सर्दी सहसा तेज हो गयी है। इसे आगरा उतरना है और यह जग रहा है। डर रहा है कि कही सोया न रह जाये और उसके सोये रहनेमे आगरा गुज़र न जाये। मेरे साथ इसका उलटा होता रहा है कि मै गुज़र जाता हूँ और जगहे खडी रह जाती है, घटनाएँ खडी रह जाती है, प्रतीक्षा प्लेटफॉर्म-टिकिटके सफेद रंगको हथेलीमे महसूस करती रह जाती है · फिर कोई पुल है सामने :

खड – खड – खड,

खड – खड – खड,

खड – खड – खड……

ट्रेन पुलपर-से गुज़र चुकी थी उस रात लेकिन मुझे हरहमेश यही अहसास होता रहा कि वह पुलपर-से ही गुज़र रही है। ज़ोरकी खड-खड़-

खड, खड-खड-खड और उसी तेज़ीसे दौडते गतिमय मेरे विचार। ट्रेन सीधी पटरियोपर चलती है सो आगे बढती दिखती है लेकिन मेरे विचार गोल-गोल घूमते है—आवर्तपर आवर्त ''आवर्तपर आवर्त'''। एक घेरेसे जुडा दूसरा घेरा'''।

एक मीठी कल्पना उस संगमरमरके शरीरवालीकी—एक सूखा स्वाद भाकरका – एक सहज औपचारिकता डब्बा लौटानेकी। उसने घर जाकर जब डब्बा खोला होगा'''। सोचा होगा अब कौन पकाये खाना-सबेरेकी भाकर ही खा लूँ। थाली लेकर बैठी होगी, ग्लास-भर पानी पासमे रख लिया होगा। सोच रही होगी—वाह रे डब्बे, कहाँ वी० टी०के टी० सी०से पहचान की'''और डब्बा खुला होगा—ढक्कन झन्नसे नीचे गिरा होगा'''आइस हलवेके टुकडेका बादामी रंग, पिश्ता और केशर'''उसने एक टुकडा उठाया होगा'''एक बार सोचा भी हो कि भाकर-हलवा कैसे बन गयी? ''फिर वह टुकडा उसने और ऊपर उठाया होगा, कौन है वह, क्यो रखा हलवा'''फिर उस टुकडेको दाँतोसे काटा होगा—फिर कटा हुआ टुकडा गोल घूमा होगा, दाँतोसे कुछ चिपका होगा'''वह उस टुकडेको चबाते-चबाते एकदम आइनेमे देखने लगी होगी—सोचा होगा कल मै आजवाले वक्तपर ही उसी ट्रेन उसी डब्बेमे जाऊँगी'' उसी तरह कहूँगी—प्लीज़ हेल्प मी और वह भीडमे-से आगे आकर मेरा हाथ पकड मुझे ऊपर ले लेगा—चेहरे-ही-चेहरेसे कहेगा—हल्लो'''वह एक हल्लो'''कैसा लग रहा था गेटपर खडा'''या यह भी हो सकता है कि ढक्कन जब झन्नसे बजा होगा तो उसकी आँखे लाल हो गयी हो'''भौहे खिच गयी हो, जोरसे बोली हो—बदमाश कहीके, मेरी भाकर खा गया और यह गन्दा हलवा मेरे डब्बेमें रख दिया'''फिर उसने सारा हलवा मोरीमे फेंक दिया हो और मुझसे बदला लेनेकी बात सोच रही हो''''

मैं इतने सोचनेपर कही भी पूर्णग्राम नही लगा सकता। उसके बारे

सोचता हूँ तो सोचे ही चला जाता हूँ। जब भी उसके बारे सोचा है, अब और तब तो उसकी काली किनारवाली साडी प्लेटफॉर्मपर हिलती दिखी है। रोज़ कुरलासे वी० टी० और मेरी ड्यूटी न हो तो वी० टी० से कुरला····अब मुझे यह भी याद हो आता है कि उन दिनो मै जब-जब उस लडकीके बारे सोचता था तब-तब मेरे बाल सफेदसे काले होने लगते थे·· ऐसा न भी हुआ है तो कमसे कम उस उतने समयके लिए तो मै अपने सफेद बालोको ज़रूर भूल गया हूँ। वर्तमान यानी काले बाल, अतीत यानी सफेद बाल····

और अब स्मृतिके जिस भी ओने-कोनेकी सफाई करता हूँ भाकरपर फफूँद चढी हुई दिखती है, अचारमे-से दुर्गन्ध आती है। अँधेरेमे बाहर कुछ दिखता तो नही, गूँजती है तो यही एक ध्वनि .

छक् – छक् – छक्,
छक् – छक् – छक्,

वह रात कितनी बडी प्रतीक्षाकी रात थी, कैसी उत्कण्ठाकी रात, कैसी जानलेवा जिज्ञासा कि डब्बेमे मेरे रखे हलवेपर क्या प्रतिक्रिया रही होगी····क्या-क्या सोचा होगा उसने····? फिर बेचारोकी डबल फास्ट छूट पडी थी और कही नही रुकी थी, रुकी ही नही थी। रोज़की तरह ही हम लोग ट्रेनमे बैठे थे। वही पहला डील चल रहा था—मै न सीक्वेन्स बना पाया, न ट्रेन ही, यहाँतक कि रग भी हलके न कर पाया कि पॉइण्ट तो कम चढते मेरा ध्यान तो बाहर था। मै एक-एक स्टॉप गिन रहा था—ठाकुरली, डोम्बिबली, दिवा, मुम्बरा, थाना, मुलुण्ड, घाटकोपर और···और···कुरला मै बाहर झाँकनेकी धुनमे कुरलाके धक्केमे ही लग गया और बातकी बातमे नीचे आ गया···फिर फ़ुटबोर्डपर चढ गया और ट्रेन भी चल दी। उसे पता तो था कि मै इस डब्बेमे होता हूँ,

फिर क्यो नही आयी ? उसे आ जाना चाहिए था···लेकिन वह हलवेसे नाराज हो गयी होगी, मैने ऐसा करनेमे बडी जल्दी की—जल्दी क्या की मैने ? ए० एस० एम० का प्रमोशन नही होता, वह मिठाई नही बाँटता और मै उस डब्बेमे मिठाई नही रखता ··फिर कुरलासे वी० टी० तकके सारे स्टॉप मुझपर-से गुजरे, मै उनपर-से नही गुजरा। वे अपने तई गुजरते रहे।

"मै आपको ही देख रही थी···।" वह लेडीज क्लाससे उतरकर मेरी तरफ आ गयी थी। वही डब्बा एक हाथमे, दूसरेमे वही दो हाथ और दीपकवाली फाइल। काली किनारकी जगह अब लाल रंग···लाल चूडियाँ, लाल ब्लाउज······

—"आप मुझे देख रही थी ? किसलिए ? मैने आपका डब्बा तो लौटा दिया न ?"

"जी, वह तो आपने कल ही लौटा दिया था लेकिन मै इसे आपको फिर लौटाना चाहती हूँ। 'उसने कुछ ऐसी तेजी और नाराजीसे यह बात कही कि मै सक्क् रह गया। बोली वह—"यह लीजिए और इसे खाली करके शामको लौटा दीजिए····"

मेरा हाथ जैसे मशीनकी तरह उठा और मैने उससे डब्बा ले लिया ··· तो इसने मेरा हलवा लौटा दिया····मेरा जी चाहा कि क्षमा माँग लूँ उससे, कहूँ गलतीसे वह हलवा मैने डब्बेमे रख दिया था—ठीक है, मै अभी ही वह डब्बेमे-से निकालकर डब्बा आपको लौटा देता हूँ। मै सोचूँ-सोचूँ कि वह गेटसे बाहर जा सीढियाँ उतर गयी···उसका उस झमकके साथ चला जाना · मै अपनेतई परेशान हो गया था।

मैने जब डब्बा खोला तो मेरी आँखे चमकने लगी। वे ही तीन भाकर—खूब घी लगी, अचार, भाजी और वैसे ही उर्दूके कागज़मे बँधा

हुआ नमक''' शायद जीवनमे पहली बार मै वैसा खुश हुआ था—जैसे खूब उमसवाले दिन एकदम बादल घिरे हो और खूब पानी बरस गया हो। मै उस डब्बेसे उठनेवाली लाटमे सिर ऊपर तक नहा गया। कोई ट्रेन छूटने-को थी और घण्टे बज रहे थे, कोई दो बिछुड रहे थे और एक-दूसरेसे लगे खडे थे ''प्लेटफॉर्मका वह वातावरण मेरे लिए समुद्र हो गया था, उसपर एक पालोवाली नावमे मै बैठा था, नावमे फूल-ही-फूल भरे थे और हवाएँ इतनी-इतनी तेज़ चल रही थी कि नाव अब उलटे तब उलटे'''' ।

जैसे नावकी एक कोई डगमग मुझे हिला गयी हो। ट्रेन जब मोड-पर घूमती है तो एक-एक यात्री उसे अनुभव करता है सोते हुओका सपना सूतकी तरह टूट जाता है, जगते हुओकी आँखे कही भी जाकर जुड जाती है। एक ठुमरी समाप्त होती है कि दूसरी आरोहपर आ जाती है :

छक्—छक्—छक्,
छक्—छक्—छक्,
छक्छक्छक्छक्छक् ''' '

हम दोनो लौट रहे थे। एक ही सीटपर पास-पास बैठे थे। उसे ऑफिससे आनेमें देर हो गयी थी और हम फास्ट चूक गये थे।

"आज मेरा ऑफ है।"

"कब होता है ऑफ ?"

"कभी भी। मुझे असलमे ऑफकी कोई जरूरत ही नही रहती। दिन-रात भी अगर कोई मेरी ड्यूटी लगा दे तो मुझे कोई एतराज़ नही'''।"

"रहते कहाँ है ?"

"कल्याण।"

"यह तो पास ही है।"

"कल्याण पास है ?"

"हाँ। दूर है कसारा, इगतपुरी ..."

फिर पूछा—

"अच्छा मकान होगा ?"

मै हँस दिया था और उस हँसीके साथ ही रामवाडीके 'ई' ब्लाकवाले बरामदेमे पडी खाट मुझे याद हो आयी थी। जी हुआ था कह दूँ एक खाट है मेरे पास, उसपर भी पैर सिकोडकर सोना होता है—लम्बाई कम है उसकी पर नही कहता। जाने क्यो मनमे यह विचार उठा था कि यह खाटवाली बात कह दी तो इसकी आँखोको चोट पहुँचेगी—आँखोको इस लिए कि सपनोकी खोली वही तो है....

"आप हमेशा गेटपर ही रहते है ?"

"नही। वहाँ तो किसी दोस्तके कहनेसे खडा हो जाता हूँ। मै तो स्लीपरमे चलता हूँ हो सकता है कल ही ड्यूटीपर होऊँ और फिर तीन दिन बाद लौटूँ . ।"

वह मुसकरा दी थी, तीन दिन बाद सही, लौट तो आयेगे ?"

"क्या मतलब ?" हम दोनोके प्रश्न एक-दूसरेसे टकराकर वृत्त बना गये थे। बचपनमे हमेशा रेल-रेल खेलते यह सोचा करता था कि कभी तेजीसे आती दोनो रेले हवाओकी तरह एक-दूसरीसे टकराकर बवण्डर बन जायें तो कैसा रहे ?...

हम दोनो मुसकरा रहे थे।

"आप वहाँसे आयी है ?"

"पुणेसे ? मेरे दादा है वहाँ।"

"और ?"

"दो भाई, तीन बहने...।"

"दादा क्या करते है ?"

"पेन्शन मिलती है, इसीसे मैने नौकरी ढूँढो। इसी साल टाइपिग

सीखा …"मेरे मामा मलाबार रहते है नौकरी उन्होने दिलवायी है।"

"और कुरलामे ?"

"एक खोली मिल गयी है…"

कुरला।

वह उतर गयी। मैने हाथ हिला दिया तो वह बोली—"आइए ना। चहा पीकर दूसरी ट्रेनसे चले जाना।"

"नही, अब जाऊँगा।"

"आइए भी।"

ट्रेन छूट चुकी थी लेकिन मै उतर गया। मुझे स्पीड पकडती ट्रेनमे-से उतरना बडा पसन्द है—ट्रेनकी दिशामें एक पैर नीचे और फिर दूसरा नीचे और हम कुछ देर दौडते है और दौडकर आगे निकल जाती है ट्रेन… क्षण-भरको ऐसा लगता है जैसे चकरीके झूलेमे बैठ लिये हो।….

छक् - छक् - छक्,

छक् - छक् - छक्,

छक्छक्छक्छक्छक्छक्….

मै इस आवाज़पर-से आँखे हटा लेता हूँ। आँखे जैसे उस आवाज़के बीचमे-से किसी जालको खीचे लिये आ रही हो। मै उसीको तो देख रहा हूँ…

एक खाट थी जिसपर नीले रगकी चद्दर बिछी थी। एक छोटा टेबिल था जिसपर खरगोशवाला मेजपोश फैला था। एक छोटा-सा फूलदान था जिसमे उसने अपने आँकडे रख छोडे थे।

"बस, एक खोली है ?"

"मुझे तो यही बहुत है। करना भी क्या लेकिन दादा और भाई-बहनोको छोडकर यहाँ आयी हूँ तो बिलकुल अच्छा नही लगता। दादा

आये थे । मेरी व्यवस्था करके चले गये है ।"

"उन्हे भी यहाँ क्यो नही ले आती ?"

"फिर सब लोगोका गुजारा कैसे होगा ? यहाँसे मै रुपया भेजा करूँगी तो वे ठीकसे रह पायेगे···भाइयोकी पढाई पूरी होनेको छह साल बाकी है, बहने भी छोटी है···"

"यानी आप ही अर्निग मेम्बर है···।"

वह स्टोव जलाने लगी । बोली—"चहा दो बारमे बन पायेगी । इसमे केवल डेढ प्याला पानी आता है ।"

"तो कोई बात नही । फिफ्टी-फिफ्टी कर लेगे ··।"

लेकिन वह चाय बनानेके बजाय पोहे बनाने लगी । उसका स्टोव बडी जोर-जोरसे आवाज़ करता था । मेरी एकाध बात वह उस आवाजमे सुन ही नही पायी थी ।

पोहे थोडे जल गये थे और चायमे शक्कर कम थी लेकिन उसका रग एकदम संगमरमर था और उसके दोनो हाथ साबुत थे और उसे दोनो आँखोसे दिखाई देता था । मै देख रहा था—उसका चेहरा, वही पुणे-टाइप गालकी हड्डियाँ, कुहनीसे नीचे तक हाथ, दो छोटे-छोटे पाँव और कमरपर एक गोल वृत्त खुला हुआ····

चर्चगेटकी भीड । लगातार आती-जाती ट्रेनें । कन्धे छिल जायें इतने लोग । सब व्यस्त है, कोई किसीकी तरफ देख भी नही रहा है ।

"आखिर आपको चर्चगेट ही क्यो पसन्द है ?"

"क्योकि यहाँ भीड रहती है । खूब शोर रहता है । आती-जाती ट्रेनकी आवाज, ह्विसल और भी कितने ही शोरका मेल बनता रहता है ।"

"इससे हमे क्या ?"

"अकेलेमे कोई दो मिलते हैं तो लोग सन्देह करते है, उनकी चर्चाएँ होती है …!"

"और भीडमे ?"

"भीडमे कोई दो बाते करते दिखाई देते है तो लोग समझते है कि कोई दो यात्री है भाई, कर रहे होगे बाते ।"

"लेकिन यहाँ तो ठीकसे खडे रहना भी मुश्किल है ।"

"अपने-आपमे खो जाओ तो कोई मुश्किल नही, लोग आसपाससे गुज़र जायेगे !"

"लेकिन कोई पत्थर है हम लोग ?"

"पत्थर तो नही लेकिन मशीन जरूर है !"

"अच्छा तो मशीन साहब, कॉफी पी ले जल्दीसे अब, फिर वी० टी० पहुँचना है ।"

"मुझे सब ठीक-ठीक याद है । वह टिकिट खरीदना, काफी लेना । वह उसका मेरी ओर प्याला बढाना । वह मेरा कॉफी पीना । वह उसका हँसना । वह उस मोटे आदमीका हमारे बीचमें-से गुजर जाना ।…

"ओ रहा ताजमहल ।" उस आदमीने अपने-आपको खिडकीसे आधा बाहर निकाल लिया है—"आज चाँदनी रात है ना…।

मै अपनी बर्थपर उलटा लेटकर आधा नीचे झुक आया हूँ । मेरे सिरहाने हैं एक गुजरता हुआ ताजमहल और साथ दौडती चाँदनी । मै जब दोबारा नीचे झुकता हूँ तो पाता हूँ कि उसने खिडकी बन्द कर दी है : हवा रुक गयी है, आवाज धीमी हो गयी है, चाँदनी कगारके ऊपर रह गयी है और ताजमहल ट्रालीमे धरा चला आ रहा है । संगमरमरका इसीलिए तो बनवाया कि बेगम भी इसी ढगकी थी । ये ताजमहल–फाज-महल तो डायवर्जन है—अच्छे भले वर्तमानमे चल रहे है और ये खीचकर अतीतके रास्ते चला देते हैं, सिरहाने बैठे, सिर चढ जायेगे । ये सब तुडवा

देने चाहिए क्योंकि इनके रास्ते अन्दरकी तरफ ही खुलते हैं। यह तो आदमीको भूख-प्यास लगती है नहीं तो वह मुमताजमहलके पास ही लेटा रहे। खटके और स्विचसे जब भावकता आये-जायेगी तो ताजमहल नाइट-लैम्पकी कीमतका हो जायेगा।

राजाकी मण्डी। वह उतर गया है।

आगरा कैण्ट। कुछ और लोग उतर गये हैं।

अब ट्रेन तेज़ीसे चल रही है। ताजमहलके गिर्द चक्कर काट रही है

छक् - छक् - छक् ·

छक् - छक् - छक्,

छक्छक्छक्छक्छक्छक्···

उसका सण्डे था। मैने छुट्टी ली थी और हम लोगोने जुहूका प्रोग्राम बनाया था। मुझे आनेमे कुछ देर हो गयी थी···लेकिन वह इन्तज़ार करती रही। जुहू पहुँचते तकरीबन शाम ही हो गयी थी। नारियलकी छायाएँ लम्बी होकर सोने जा रही थी। समुद्रका पानी खूब नीचे उतर गया था। इक्की-दुक्की लाट डरी-डरी आती और लौट जाती।

"बोलो, क्या खाना है?"

"भेल।"

हम दोनो भेल खा चुके। तीन-तीन पैसोमे पानी पी चुके तो रेतपर जा बैठे। मैने लेटते हुए कहा था "आज एक बात पूछना चाहता हूँ कि, तुमसे मेरी जो पहचान हुई ·!"

मै उसका चेहरा देख रहा था। कुहनी टिकाकर बोली वह—"पूछिए न, रुक क्यो गये?"

"मै यह पूछना चाहता था कि !"

" कि उस दिन भाकरपर घी क्यूँ नहीं लगाया था?"

"क्या तुम इतना घटिया समझती हो मुझे कि मै ऐसी बात पूछूँगा ? मै ही कौन बडा रईस हूँ। जो रुपया मिलता है उसमे-से कुछ अण्णाको भेज देता हूँ और बाकी रुपया दोस्तोको खिला देता हूँ। कभी मेरी जगह कोई बचत करनेवाला होता न तो हर महीने पचास रुपये बचा सकता था।"

"तो फिर इसी पहलीसे बचाइए।"

"मै तुम्हे दे दिया करूँगा। मेरी तो तुम ही एलायसी[६४] हो····।"

वह हँस दी थी। दोनो कुहनियाँ टिकाये उसपर चेहरा रखे थी ना–वही दो हाथोके बीच जलता दीपक फिर चमकने लगा था 'डिट्टो एलायसी थी वह।

जैसे ट्रेनका ही गला खराब हो गया हो। कैसी गन्दी आवाज़ है—

भड – भड – भड,

भड – भड – भड,

भड – भड – भड····

मोटर-लाच जोरसे भड-भड करने लगा तो वह कटते पानी और बनते-मिटते रास्तेको देखने लगी।

"अच्छा लग रहा है ?" मैने चिल्लाकर पूछा।

"हाँ। मै तो पहली बार बैठी हूँ····।" उसने उसी तरह चिल्लाकर जवाब दिया।

घुमावके धक्केसे हम दोनोके कन्धे टकरा गये। मै बोला—"सॉरी।"

"क्या कहा ?" उसने फिर चिल्लाकर पूछा।

मै बहुत धीमेसे बोला—"सुनो, तुम बहोत अच्छी हो····।"

उसे सुनाई नही दिया। उसने फिर चिल्लाकर पूछा—"जोरसे क्यो नही बोलते ?"

"सुनो। मै यह चाहता हूँ कि यह लाचकी आवाज़ हमेशा इसी तरह शोर करती रहे। तुम मेरे ठीक सामने बैठी रहो और मै इसी तरह अपने

मनके अन्दर, अन्दर और अन्दरकी सारी बाते कहता रहूँ ···।"

"मुझे कुछ नही सुनाई दे रहा है बाबा, कुछ बोल भी रहे हो या केवल ओठ ही हिला रहे हो !" उसने फिर चिल्लाकर पूछा था।

"बोल रहा हूँ कि मै तुमसे प्यार करता हूँ। मै चाहता हूँ कि हम दोनो हमेशा एक साथ रहे। हम दोनो कही दो खोलियाँ ढूँढ ले, फिर···"

उसने अपना कान बिलकुल मेरे ओठोके पास कर लिया तो मुझे मजाक सूझा और जोर-जोरसे मै बोलने लगा भड-भड, भड-भड, भड-भड ।"

"ये क्या है ? मेरे कान फट जायेंगे ···।"

मैं हँस दिया था और फिर धीमेसे बोला था—"इस आवाजकी दीवारके इस पारसे बोल रहा हूँ मै। यह आवाज़ परदा है मेरे लिए। मै कहता हूँ न कि शोरके बीच कही कुछ हो तो लोग उसपर सन्देह नहीं करते। यहाँतक कि मै क्या कह रहा हूँ यह !"

एकदम लाचकी भड-भड बन्द हो गयी थी।

"हाँ, क्या कह रहे थे ?"

"कुछ भी तो नही, मैं तो ओठ हिला रहा था।"

ओठ है तो हिला रहा हूँ। ट्रेनमे इतने लोग सोये है लेकिन किसीको मेरी कोई आवाज़ नही सुनाई दे रही है। नही तो एक इतना बडा शोर मेरे अन्दर बज रहा है कि इस चलती ट्रेनकी यह छक्-छक् बच्ची लगती है उसके सामने। सोचे जा रहा हूँ लगातार।

लेकिन उसने फिर मुझे कुरला उतार लिया। शाम ढल चुकी थी और अँधेरा गाढा हो रहा था। उसकी खोलीपर पहुँचे तो बडा अँधेरा था। स्विच ऑन किया तो लाइट नही थी। उसने एक मोमबत्ती जलायी और उस कुनमुनाते पीले उजेलेमे वह साड़ी बदलने लगी। मैंने केवल इतना

देखा था कि उसका पल्ला जब नीचे गिरा तो वह सरके यहाँ टेबिलपर रखी मूर्तिकी तरह ही दिख रही थी

वही पीले उजेलेवाला उसका शरीर मुझे याद है। दूसरे दिन वह... बेहद चुस्त ब्लाउज पहने थी—स्लीव्ज़ नही थी उसकी और कमरपर दिखनेवाला वृत्त अधिक चौडा था। गलेपर बेहद नीचे तक एक वर्गाकार प्लेटो जिज्ञासाकी भूमि तक दिख रहा था। उस कटवर्कवाली साडीकी पटलियाँ एक-दूसरेपर ऐसे चिपकी थी कि पेटीकोटके सलोका हिलना तक बाहरसे दिख रहा था। सरके यहाँवाली वह सगमरमरकी मूर्ति बडे पुराने जमानेकी है तभी तो उसने कमर तक वस्त्र उतार रखे थे तब जाकर वह अर्धनग्न दिखने लगी थी 'और कोई उसे देखता'' वह सारे-सारे वस्त्र पहने थी लेकिन वे बस्त्र उसके इंच-इंच शरीरका आभास दे रहे थे।

ठीक है कि उस दिन सक्रान्त थी और त्योहारके लिए वह नये कपडे पहने थी। उसने तश्तरोमे तिल-गुल[६५] रखा था और तश्तरी खरगोशके मेजपोशवाले टेबिलपर रखी थी लेकिन मेरी कल्पना उस लडकीको बार-बार टेबिलपर खडा किये दे रही थी—वैसी ही सुन्दर उतनी ही नग्न यह भी है····

हम उस शाम गेट वे ऑफ इण्डिया गये थे। 'दिलदार' पर बैठे समुद्रकी ओर पीठ किये आती हुई कारे देख रहे थे। उसने सीग-चने[६६] खरीद लिये थे, खा रही थी और पूछ रही थी—"फिर क्या हुआ ?"

—"फिर मै गुड्स क्लर्क बन गया। दिखाऊँगा कभी तुम्हे कर्नाक ब्रिज लेकिन तकदीर थी तो इण्टरव्यूमे निकल गया। नही तो अभीतक एण्ट्री लेता रहता।"

—"और मै कभी बम्बई नही जाती' '।"

—"तुम बम्बई आ भी जाती तो क्या होता। मै तो यह कहूँगा कि

अगर बम्बईमे ट्रेने न होती तो हमारी मुलाकात नही हुई होती ।"

"तो क्या सचमुच आप ट्रेन-ही-ट्रेनमे एक-एक सप्ताह बिता लेते है ?" "शप्पथ तुझो वेणीची ··· ।"[६७] मै बहुत दिनो बाद मराठी बोला था सच तो यह कि मै सोचता भी हूँ तो मराठीमे ही फिर जब उसका हिन्दीमें उल्था करता हूँ तो दोस्तोसे बात कर पाता हूँ ।

वह हँस दी थी और उस हँसी-हँसीमे उसने मेरे कन्धेपर हाथ रख दिये । यह पहली बार हुआ । इतने लोग हमे देख रहे है, इतने लोग चहलकदमी कर रहे है हो सकता है कोई इसका परिचित ही इमे देख रहा हो····उसने मेरे कन्धेपर हाथ ही नही रखा, हलकेसे मुझे अपने नज़दीक भी खीच लिया····मुझे अण्णाका डर लग आया, मुझे मैने उसका हाथ नीचे उतार दिया · ·

"क्यो ?"

"इतने लोग बैठे है ?"

"नजर घुमाकर तो देखिए, कितने जोडे इस दीवारपर इसी तरह बैठे है ···नही ।" उसने फिर मेरे कन्धेपर हाथ रख दिया था । मैने उसकी तरफ गौरसे देखा था ।

वह प्रसन्न-मन हँस रही थी ।

समुद्र हम तक लहरें भेज रहा था ।

लाचवाला पुकार लगा रहा था ।

सीगवाला छोकरा दूर चला गया था ।

"क्यो, क्या तुम्हे सचमुच डर नही लगता ?" मैने भी उसके कन्धेपर हाथ रख दिया था—उसके सगमरमरी कन्धेपर मेरी उँगलियाँ पतवारकी तरह उठ-गिर रही थी ।

"डर ?" वह हँस दी थी—"आपके साथ, आपके कन्धेपर हाथ रखे हुए मुझे किसका डर ?" उसने जब इतना कहा तो मैने स्पष्ट देखा कि उसकी आँखोमे ज्योति तो है ही नही, वह तो निपट अन्धी है—

टेबिलपर रखी उसी सगमरमरकी मूर्ति-जैसी....जैसी वह अर्धनग्न थी, यह भी वैसी ही है, जैसी वह अन्धी थी वैसी ही यह भी है....

अब मै लेट गया हूँ। कम्बल ठीकसे ओढ लिया है कि सर्दी नही लगे। मुँह ढँक लिया है कि रोशनी आँखोपर नही पडे। एक कान तो नीचे दबा है, दूसरेपर अपना हाथ रख लिया है कि आवाज न सुनाई दे। हाथ जब भी कानपर-से हट जाता है एक तेज छक्-छक्-छक् दौडकर मुझे छू लेती है। मै फिर कानपर हाथ रख लेता हूँ।

शोरको तो कान पकडकर बाहर निकाल सकते है लेकिन बीते-अनबीते दृश्योको कैसे निकाले बाहर? पलकोके दरवाजे बन्द कर दो, ताला ठोक दो उनपर तो वे छोटा-सा रूप धरकर आँखोकी किसी दरारसे अन्दर आ जायेगे और अन्दर आकर जितने बडे है उससे भी बडे हो जायेंगे। सहसा मेरा हाथ कम्बलको ठीक करने कानपर-से हट गया है और गरजने लगा है वही जिद्दी शोर :

छक् – छक् – छक्,
छक् – छक् – छक्,
छक्छक्छक्छक्छक्.......

वह जिद करती रही थी कि पुणे बससे चले लेकिन मैने मना कर दिया, कह दिया कि चलेंगे तो ट्रेनसे ही। शायद एक सण्डे था और एक कोई छुट्टी और एक ऑफ—ऐसे तीन दिन थे हमारे पास।

रात-भर मुझे नीद नही आयी थी। जी चाह रहा था कि अण्णाको एक खत लिखकर बतला तो दूँ कि ऐसी-ऐसी एक लडकीसे मेरी पहचान हो गयी है" मुझे नही पता था कि यह ऐसे सहसा मुझे पुणे चलनेका निमन्त्रण दे बैठेगी। मै रात-भर सोचता रहा था कि इसने अपने दादाको मेरे बारे खत लिख दिया है और दादाने कहा होगा कि ले आओ

उसे पुणें तो बात पक्की हो जाये ···मेरे मनमे हलकी गन्धोवाले फूलो-सी खुशी गमक रही थी। कभी उसकी साडीका बॉर्डर याद आती, कभी उसका सगमरमर-जैसा शरीर, कभी उसका डब्बा और कभी उसकी फाइलपर बने दो हाथ और जलता दीप। ' उसका शरीर सगमरमर, उसकी आँखे अन्धी, उसका पहनावा अर्धनग्न 'सरके घर टेबिलपर रखी वह मूर्ति मुझे कभी नही भूल पडती थी, ऐसे याद आती जैसे उसे मैंने साकार देखा है देखा है क्या, रोज ही देखता हूँ ··

मै सारी रात यह याद करता रहा था कि वह कब-कहाँ-कैसे मिली है और किन-किन सीढियोपर पैर रखती वह मेरे नजदीक आ गयी है। मुझे हर-हमेश यही लगता रहता कि हम उसी लाचमे बैठे है, ज़ोर-ज़ोरसे भड-भड, भड-भडका शोर हो रहा है, वह मेरे सामने बैठी है और मै बोल रहा हूँ—"देखो, अब हम इतने अधिक परिचित हो गये है एक दूसरेसे कि किसी फॉर्मेलिटीकी ज़रूरत ही नही रही है अब। कल तुम दादा-से साफ-साफ कह देना कि हम दोनो शादी करना चाहते है' 'जैसे सहसा लाचकी आवाज़ थम गयी है और मुझे लग रहा है कि अण्णा बैसाखीपर अपने-आपको साधे गेट-वेपर खडे मुझे घूर रहे है—चश्मेको नाकसे नीचे उतारे हुए ··

पुणे।

पुणे यानी छोटा-सा, बम्बईके शोरसे कटा हुआ अलग शहर। पुणें मुझे हमेशा ऐसा लगता है जैसे डीलक्सका कोई कूपे हो—शीशे गिरे हुए है और ट्रेनकी छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक् और सीटी और उसके पुल-पर-से गुजरनेकी खडखडाहट नही सुनाई दे रही है।·······

उनका वह छोटा-सा घर, सामने छोटा-सा बगीचा, छोटे-छोटे कमरे, तीन छोटे-छोटे मुड्ढे, छोटे-छोटे बरतन, छोटे-छोटे भाई-बहन सब-कुछ ऐसा सक्षिप्त जैसे बरबस उन्हे किसीने ऐसा बना दिया है।

"हाँ, दादा, ये ही है वे।"

"हाँ, तूने लिखा था इनके बारेमे। अच्छा किया कि इनको पुणे दिखाने ले आयी।"

दादा मेरे अण्णासे ज़्यादा बूढे है। वह तो उनका पैर काट डाला गया सो बैसाखीने उन्हे असमय हो बूढा बना दिया है। नही तो अण्णा? अण्णाका तो वह ताब था कि ज़ोरसे डाँट दे तो शण्टिग करता एजिन रुक जाये।....

उसने खूब अच्छा खाना पकाया था और हम सब लोग बैठे खाना खा रहे थे। वेसा चारी ठाव सईपाक[६८] मैने अक्का मरी तबसे देखा ही नही था। मै दादाका प्यार देख रहा था और खुदके बारे सोच रहा था कि मै अपने सारे जीवनको फिज़ूल ही ट्रेनके कोयलेमे झोंके जा रहा था.. 'पटरियाँ ट्रेनके लिए है, मेरे लिए थोडे है, जिसके लिए है वह चले लोहेके रास्तेपर मेरे पैर लुढकते नही चलते है, और जो चलता हो उसके लिए रास्ता पहली जरूरत नही है।

"तो ये एलायसीमे पहलेसे होगे?"

"हाँ, दादा.. 'उसने मेरी तरफ देखकर जवाब दे दिया। मेरे मुँहका कौर मुँहमे ही घूम गया।

"हाँ, तूने लिखा ही था कि ये भी कुरलामे ही रहते है।"

"जी दादा। वहाँ पास ही रहते है...।" और वह मुझे जल्दी-जल्दी मुरब्बा परोसने लगी थी मैने लेनेसे इनकार कर दिया था... लेकिन इसने दादाको मेरे बारे ये क्या बाते बतलायी...? यह झूठ कहनेको क्या जरूरत थी कि मै एल० आई० सी० मे हूँ और कुरलामे ही रहता हूँ . ?

मै जब दरवाजेपर खडा दाँत साफ करने लगा था तो उसने मेरे पीछे आकर धीरेसे कहा था—"मै आपको सब बतला दूँगी... !"

मै दाँत साफ करता ही रह गया था और हँस दिया था – हो सकता है इसके दादा एल० आई० सी० मे नौकरी करनेवालेसे ही इसकी

शादी करना चाहे, शायद इसीलिए यह इतना झूठ बोली।' मैंने सीक फेंक दी थी और बच्चोंसे बात करने लगा था। उनके मुझसे बननेवाले रिश्तेके प्रति मैं हर क्षण सजग था।

फिर हम लौटे तो दादा स्टेशन तक छोड़ने आये थे और ट्रेन छूटते समय बोले थे – "कभी-कभी आप इस बच्चीकी सहायता कर दिया कीजिए अगर कोई ज़रूरत हो इसे तो और देखिए ···अगली बार जब आये तो अपनी पत्नीको भी साथ लाइए।"

ट्रेन छूट चुकी थी।

ट्रेनने स्पीड पकड़ ली थी।

ट्रेन स्पीडपर थी।

लेकिन मुझे ऐसा लग रहा था जैसे कोई चीज पटरीसे उतर गयी है और वह इसी गतिके साथ-साथ घिसटी चली आ रही है। एकदम वह खरगोशवाला मेज़पोश नीचे गिर गया था, सायलेन्सरवाले स्टोवपर दूध उफन गया था, मेरी खाटपर-से किसीने बिस्तर हटा दिया था—मैंने दो ताशोंपर एक ताशकी छत, उसपर फिर दो ताशे और उनपर फिर एक छत, उसपर फिर दो ताशे और उनपर फिर एक छत, फिर दीवार, फिर छत, दीवार-छत, दीवार-छत ' जो इतना बड़ा ऊँचा महल बनाया था, वह सहसा ढह गया था।

"मैंने तेज अवाजमें पूछा—"यह तुमने क्या किया?"

मुझे देख, मेरे इस प्रश्नको सुन वह क्षण-भरको काँप गयी लेकिन फिर तौल तौलकर कहने लगी—"मैं क्या करती। दादाने ही कहा था कि ऑफिसरके या कुरलाके किसी सज्जन आदमीसे पहचान कर लेना जो कभी समयपर काम आ सके।' 'दादाने यह भी कहा था कि वह आदमी शादी-शुदा ही हो तो मेरे कर्तव्यमें कमी नहीं आयेगी। ···जब मुझे नौकरीका ऑर्डर मिला तब दादा रो दिये थे कि मुझे अपनी बिटियासे इसलिए नौकरी करवानी पड़ रही है कि वह हमारा पेट पाले। मैंने दादाको धीरज

बँधाया था कि वे किसी बातकी चिन्ता न करें। दादाकी आँखें सूख नही पायी थी, वे रोते हुए ही बोले थे—यह तेरी शादीकी उम्र है, तेरी अपनी उम्र है लेकिन इन छोटे-छोटे बच्चोके लिए मै इसे तुझसे माँग रहा हूँ। देख… किसी भावुकतामे छह वर्ष पहले ही ब्याह मत कर लेना कि हम सब भूखे मर जाये। नही तो तू ब्याह कर ले और ये पढकर इस काबिल भी न बन पाये कि पेट तो भर सके। ''मैने दादाके आँसू पोछ दिये थे '।'' वह वाक्योको तोड-तोडकर सारी बात कह गयी।

"फिर तुम मेरे इतने नजदीक क्यो आयी? जब तुम्हारे सिर कर्तव्यका इतना बडा भार था तो मेरे साथ इतना फ्रैंक होनेकी क्या जरूरत थी?" मै खिडकीसे बाहर पेडोको गुजरती कतारपर चल रहा था।

"मै समझी आप मुझे समझते हैं।"

"यह भ्रम कैसे हुआ?"

"क्योकि आपने पहले दिन बगैर घीवाली वे भाकर खा ली थी और मै इससे यह समझी कि मेरी जिन्दगीके रूखेपनको आप हमदर्दीसे देख रहे है। यदि उस दिन वे भाकर अपने नही खायी होती तो मेरे मनमे आपके प्रति कोई भ्रम पैदा नही होता।"

"लेकिन तुम्हारे सिरपर जब इतना भार था '"

वह बेहद हलकेसे हँस दी थी—"आँचके माथेपर वज़न रख दो तो उसकी गरमी ही समाप्त हो जाती है क्या? आप ही तो कहते है कि इस ज़मानेमे हमे आस-पासके शोर और ट्रेन-लाचकी छक्-छक्, भड-भडसे डिस्टर्ब नही होना चाहिए ' आप मेरे दादाकी खाँसीको ट्रेनकी आवाज़ ही साफ समझ लीजिए'''मेरे भाई-बहनोके हल्लेको लाचकी भड-भड ही समझ लीजिए''''समझ लीजिए हम चर्चगेटके बीचमे ही खडे है और लगातार वही खडे रहना है। इतनी आवाजोको आप टॉलरेट कर रहे हैं तो''''!"

ट्रेन पुलपर-से गुजरी थी – खड-खड़-खड-खड-खड-खड और उसने दोनो

हाथोसे सिसकियाँ लेते हुए अपना चेहरा छिपा लिया था। मैने इतना ही कहा था – "नही। रोते नही ।"

और ज्यो ही मैने उसकी तरफ गौरसे देखा था तो मै घोर आश्चर्यमे डूब गया था – उसके दोनो हाथ कटे हुए थे – दोनो हाथ······

मैने उस मूर्तिको आहिस्तासे उठाकर टेबिलके बीचोबीच रख दिया था – शरीर सगमरमर, पहनावा अर्धनग्न, आँखे अन्धी और हाथ कटे हुए···

ताजमहल अब मेरे सिरहानेसे चला गया है। खूब पीछे छूट गया है लेकिन लग यही रहा है कि उस बीते हुए सगमरमरके सौ और भाई मेरे सिर सवार हो गये है। मै कम्बल ठीकसे ओढे हूँ। आँखे भी मीचे हूँ लेकिन कानपर-से मेरा हाथ हट गया है। स्लीपरमे एक नीली बत्ती जल रही है – हर चीजको वह नीला बना रही है। लगी हुई चोट भी अपनी तीव्रतामे नीली पड जाती है, शायद इसीलिए मै नीले रगको देखना नही चाह रहा हूँ। उसको डाँटने और डाँटकर प्रश्न पूछनेके एक खयालने ही इतनी उत्तेजकता पैदा कर दी है कि आँखोको खुला रखनेमे ही आराम मालूम होता है। मेरा शरीर हलकेसे हिल रहा है, उतने ही हलकेसे जितने हलके कोई किसीको सोतेमे हिलाकर जगा दे। यह अपने तई सुलाने-जगानेकी कोशिश चल रही है। आँखे घुमाकर देखता हूँ कि वह कटे हाथोवाली मेरे सिरहाने बैठी है और ट्रेनकी स्पीड धीमी होकर फिर तेज़ हो गयी है

छक् – छक् – छक्,
छक् – छक् – छक्,
छकछकछकछकछकछक·········

मैने कल्याण जाकर देखा था कि मेरी खाट वहाँ नही थी। शायद किसीने अन्दर रख दी हो। "सामने पडी एक बैचपर ही मैने पैर फैला लिये थे। भाऊका कुत्ता सारी रात मेरे पैताने बैठा कुँकियाता रहा था। मेरी आँखो सामने सारी रात एक ट्रेन चलती रही थी पुणेसे बम्बई तक। उसे जब सबसे पहले उस कटवर्ककी साडीमे देखा था तब उसके अन्दरसे बाहर झाँकते शरीरको देखते भी मै चौका था, इसलिए कि वह उस मूर्ति-सी दिख रही थी। फिर जब मैने प्रेममे उसे अन्धा पाया, उसकी आँखोको ज्योतिहीन देखा तो मै डर गया था इसलिए कि कही यह वही मूर्ति तो नही है? सबसे पहला सकोच तो उस पहले दिन कुरलामे इसे ट्रेनमे चढते देख इसके सगमरमर-जैसे शरीरसे हुआ था मै केवल एक, एक और एक बातसे डर रहा था कि सब कुछ तो ठीक लेकिन इसके हाथ कटे हुए न हो"'किसीके हाथ ही कट जाये तो वह बम्बईकी रेस लगाती ट्रेनमे ही कैसे चढेगा? खानेका 'डब्बा ही कैसे उठायेगा? मेरे कन्धोपर एक नरम रेशमी भार ही कैसे रखेगा? इस युगकी व्यस्तता और स्पीडमे दो हाथोकी बडी जरूरत है अपने-आपको सन्तुलित करनेके लिए।

नही तो चलती ट्रेनमे कोई भी किसी धक्के या झटकेसे नीचे गिर सकता है। मै इस समय उलटी तरफ मुँह किये हूँ इसलिए केवल तख्ता दिख रहा है, करवट बदल लूँ तो सारी भीड-भरी दुनिया दिखने लगेगी। मुझे हमेशा उस तरफ देखना अच्छा लगता है जिधर कोई न हो। यहाँ तो यह मुश्किल कि सिरहाने-पैताने दोनो तरफ कोई-न-कोई आँखे बिछाये रहता है। इससे तो यही आवाज भली

छक् — छक् — छक्,
छक् — छक् — छक्,
छकछकछकछकछकछक······

रामवाडीका कोई भी आदमी जगे और भाऊ यह पूछने आये कि तीन दिनसे कहाँ थे इसके पहले ही मै उठकर चल दिया था। इतनी जल्दी आ गया था स्टेशनपर कि फिफ्टी-एट डाउन मिल गया। एक मन मुझसे बार-बार यह कह रहा था कि अब मुझे उससे कभी नही मिलना चाहिए···· ऐसे सम्बन्ध अच्छे नही होते है जिन्हे कोई नाम ही नही दिया जा सके··· दादाके सामने मै एक विवाहित और एक जिम्मेदार आदमी हूँ, ऐसा आदमी जो उस लडकीको अपनी बहन या अपनी बेटी समझे। इस बेटी शब्दसे मुझे सहसा यह खयाल आ गया कि दादाने मेरे सफेद बाल जरूर देखे होगे और विश्वास हो गया होगा उन्हे कि सच ही यह आदमी अधिक उम्रका है और कुरलामे मेरी लडकीका गार्जियन बना रह सकता है।

मै सवेरे–सवेरे वी० टी० उतरा तो यही लगता रहा था कि मैने रात-भर ट्रेनमे यात्रा की है और एक क्षणके लिए भी सो नही पाया हूँ · कोई फिर शुरू हो गया था, जैसे भरी ट्रेनमे ये दवाई-फवाई बेचनेवाले भाषण नही देने लगते है ठीक वैसे ही·· लेकिन इसमे इतनी नाराजी क्यो ? लडकीका मतलब ही यह होता है कि उसके हाथ नही है, हाथका कटा होना तो दूरकी बात है···अपने यहाँ तो हाथ होते ही नही।······

ऑफिस गया तो मेरे नाम एक तार पडा था वहाँ. 'कम भुसावल इमिजिएटली स्टॉप अण्णा इल' [६९] मैने तारको एक बार और पढा और इतना परेशान हो गया जितना कल भी नही हुआ था·· 'अण्णा बीमार है, जाने क्या हो गया अण्णाको, मै भी अजीब हूँ कि दो महीनेसे अण्णाको देखने भी नही गया।···अण्णाको तो मुझे अपने पास रखना चाहिए था। अण्णा वहाँ अकेले, मै यहाँ दिन-रात ट्रेनके शोरमे लगा··· नही, मै छोड दूँगा यह नौकरी, मै भुसावलमे ही कोई नौकरी ढूँढ लूँगा··· क्या रखा है यहाँ बम्बईमे, कौन है मेरा यहाँ·· ??? अक्काके मरनेके बाद पहली बार जाने क्या-क्या सोच मेरी आँखे भीग आयी थी। अण्णाको

पानीकी जरूरत होती होगी तो वे उठते ही कैसे होगे....? उनके लिए दवाई ही कौन लाता होगा...?

मै प्लैटफॉर्मपर घूम रहा था तेज तेज......

"मै आज ही भुसावल जा रहा हूँ।"

"क्यो ?"

"मेरे अण्णा बीमार है।"

"बहुत बीमार है ?"

"पता नही क्या बात है ? उनका पैर ही नही है, वे बगैर पैरवाले आदमी जाने कैसी तकलीफ उठा रहे होगे ?

"तो उनका पैर नही है इसलिए तुम...."

"उनका ही क्या, कोई भी बगैर पैरवाला आदमी बीमार हो तो उसके लिए सहानुभूति पैदा हो जाती है ..!"

"लेकिन जिसके दोनो हाथ कटे हुए हैं, उसके प्रति तुम्हारे मनमे कोई सहानुभूति नही है ? अरे, तुम्हारी जगह कोई और होता तो अपने दोनो हाथ उसे दे देता....।"

"क्या मतलब ?"

सामनेसे एक एंजिन जोरकी धड-धड-धड, धड-धड-धड करता गुजर गया था।

"....अरे, तुम खुद कहते थे न कि तुम तो खुद ट्रेन हो। देखा, इस एजिनको ? कैसी ताकत है इसमें। इसको मर्जीके खिलाफ कोई रास्तेमे अगर आ जाये या इसे गुस्सा आ जाये तो यह उसे कुचलकर रख दे.... और एक तुम हो .. ?"

मैंने देखा कि वही इंजिन फिर मेरे सामनेसे गुजरा है और उसी तरह आवाज करता धक्का दे गया है जिससे मेरे दिमागमें फिट बैलेन्स व्हील चलने लगा है : टिक-टिक-टिक, टिक-टिक-टिक, टिक-टिक-टिक...

सूरज निकला-निकला ही था और एक गन्दी धुन्ध फैल रही थी कि उतने सवेरे मै कुरला पहुँच गया। खोलीका दरवाज़ा खुला था और मैंने देखा कि वह उतने सवेरे कुछ लिख रही थी। मै बाहर ही उसे देखता खडा रह गया।

मेरे बाल बिखरे हुए थे। सारे कपडे गन्दे थे, जो पहने पुणेसे लौटा था, उन्हे ही पहन सो गया था और वैसा ही यहाँ चला आया था। मैंने फिर देखा कि वह अक्षर जमा-जमाकर लिख रही थी—दादाको खत ·· कि सफेद बालोवाला वह दादा कैसा लगा जो मेरे साथ पुणे आया था? ·

मैं उसे देख रहा था और ख़ुदपर नाराज़ हो रहा था कि मैंने एकपर-एक इतनी सारी ताशे जमायी ही क्यो?

सहसा वह लिखते-लिखते सुबुक उठी, पेन नीचे गिर गया और उस कागजको जिसपर लिख रही थी, दोनो हाथोसे ऐसी पीडाके साथ मसलने लगी ······

"रो रही हो?" मैंने बाहर खडे-खडे ही कहा था।

"आप? आप्प?" वह उठ खडी हुई। बालोपर हाथ फिराया और मुझे एक क्षण उन्ही आँखोसे देखकर आँसू पोछ लिये।

"आइए न?"

मै कमरेमें था। कुछ कहूँ कि वह मेरी छातीसे लग गयी और फिर सुबकने लगी।

जैसे ऊँची लाट आये और सिरपर-से पानी गुजर जाये वैसी ही कोई लहर मुझे भिगो गयी। न मैंने कुछ कहा न वह ही कुछ बोली। एक किरन सहसा कमरेमे आ गयी थी और हम दोनोको जोडती हुई एक लकीर खीच गयी थी।

उसने ऊसल [७०] बघारी थी और वह चहा बनाने लगी थी च-हा! चच-हा! जैसे चुम्बन और उसके बादकी उत्तेजना····· ·

—"अगर तुम नही आये होते तो मै कल्याण आ जाती··!"

—"आता कैसे नही ? जिसमे सूखी भाकर खानेकी समझ हो वह तुम्हे कैसे छोडता····?"

तब उसने स्टोवके पास बैठे-बैठे सण्डासी उठाकर दिखायी थी कि ऐसा कहा तो इससे मारूँगी ।

"मुझे खत लिखना कि अण्णाकी तबीयत कैसी है ?"

"हाँ । लिख दूँगा और ज्यादा बीमार हुए तो साथ ले आऊँगा ।"

"सीधे कुरला आ जाना । उनकी सारी देखभाल मै कर लूँगी ।"

"दो दिनकी छुट्टी लेकर जा रहा हूँ । गुरुवारको लौट आऊँगा ।

"कौन-सी ट्रेनसे आओगे ? बता दो तो खाना बना रखूँगी···।"

"अब यह अभीसे कैसे बताऊँ ?"

ट्रेनने सीटी दी और वह बिदामे हाथ हिलाती खडी रही । मै बडी देर तक खिडकीसे बाहर ही झाँकता रहा था—हर पेड उसकी ऊँचाईका, हर पत्ता उस-जैसा सुन्दर, हर पहाडीपर उसीके शरीरवाले उतार-चढाव। जैसे डबल लाइन हो और दूसरी पटरीपर ट्रॉलीमे खडी होकर वह साथ-साथ दौड रही हो—उसके एक हाथमे डब्बा है दूसरेमे दो हाथ और जलते दीपकवाली वही फाइल । कह रहा हूँ मै कि चार दिनकी किरकोल ले लो तुम तो माथेरान चले ·······

छक्-छक्-छक् ,

छक्-छक्-छक्,

छक्छक्छक्छक्छक्छक् · ····

अण्णा बैसाखीपर चलते है तो एक जैसी एक चलनेवाली आवाज होती है

खट् - खट्,

खट् - खट्,

खट् - खट्,

चाय-गर्रम-चाये '' चाय-गर्रम-चाये। मैने नीचे झाँककर देखा है। किसीने किसीसे पूछा है · "कौन-सा स्टेशन है ?" किसीका निंदासा उत्तर आया है—"गवालियर।" वही आवाज फिर बोलती है—"अभी गवालियर ही आया है ·?"

और जैसे खो गयी है वह आवाज। मतलब साफ है कि हमे जहाँ जाना है वह जगह आयी ही नही, आ ही नही रही, जाने कब आयेगी ?

गार्डकी व्हिसिल। एक व्हिसिल, फिर व्हिसिल। दोके घण्टे। टिमटिम करती हरी लाइट। ट्रेनकी बारीक सीटी, जैसे दो मील दूर कही किसीको पुकारने जा रही है, एक खेतसे दूसरे खेत किसीका नाम कैसे लहरपर रखकर पहुँचाया जाता है, वैसे ही

ईई - ईई - ईई···

मै भुसावल उतरकर लगभग दौडता हुआ घर पहुँचा। अण्णा अच्छे हो गये हो अबतक तो अच्छा है। नही हुए होगे स्वस्थ तो कुछ छुट्टी और बढा लूँगा या अभी ही इन्हे साथ ले जाऊँगा। कुरला पहुँचकर सब बतला दूँगा या बतलानेकी क्या जरूरत है। वह साथ रहकर इनकी सेवा करती रहेगी और हो सकता है कि एक दिन अण्णा खुद यह कहे यह लडकी अच्छी है।···

दरवाजेमे ही अण्णा बैसाखीपर खडे थे। मै पूछूँ कि वे बोले—"तार और मेरी बीमारीके समाचार सुनकर भी तुम दो दिन बाद आये ?"

"अण्णा मै बम्बईमे था ही नही···।"

"तो कहाँ थे ?"

मै उनके प्रश्नसे चौक गया लेकिन जवाब दिया—"ड्यूटीपर था। आज सवेरे लौटा तो तार मिला।" फिर एकदम पूछा—"कैसे है अब आप ? क्या हो गया था अण्णा ?"

"कुछ नही हुआ। मै बीमार हो नही हुआ था।"

"फिर ?"

अण्णा ऐसे लगे जैसे उनका चश्मा नाकपर-से नीचे उतर आया है। मै सपनेमे भी अण्णासे डरता हूँ और जब वे सामने होते है तो मेरी ज़बान हकला जाती है।

"तुम कितने दिनसे ड्यूटीपर थे ?"

"दो-तीन दिनसे ?"

"रहते कहाँ हो ?"

"कल्याण, रामवाडी।"

"एक कमरा है तुम्हारे पास या दो ?"

"एक·· ···एक है।" मैने उनकी तरफ देखा तो उन्होने बैसाखी-पर अपनेको सन्तुलित कर लिया। एक शब्द उनके मुँहसे बडे फोर्सके साथ निकला – "झूठ।" और मै दो कदम पीछे हट गया था। अण्णाकी तरफ देखनेकी भी हिम्मत नही पडी मेरी। उनके पाससे घूमकर अन्दर चला गया।··· ··

"सुनो।" अण्णा बैठे थे ओर कटे हुए पैरको मसलते जा रहे थे। मैने उनकी तरफ देखा।

"तुम पन्द्रह दिनकी छुट्टी ले लो।"

······ ··

"तुम जब दो महीनेसे यहाँ नही आये तो मै कल्याण गया। पता लगा तुम कमरेमे नही खाटपर रहते हो ··हमारे पास जब खाटकी रस्सी खरीदनेके पैसे भी नही थे तब भी हम कमरेमे ही रहते थे।·· "

··· ···

"मै एक नही, दो दिन तुम्हारी खाटपर रहा और रास्ता देखता रहा कि अब आओ, अब आओ लेकिन तुम क्यो आने लगे···!"

··· ···

मैने रामवाडीवाले एक आदमीको बो० टी० भी भेजा था। पता लगा तुम पुणे गये हो।"

••• •••

"मैने खुद भी ट्रेन-ही-ट्रेनमे हफ्तेके हफ्ते गुजारे है लेकिन तुम्हारे लिए तो घर ही ट्रेन हो गया है।"

"अण्णा!" मै सारी ताकत समेटकर बोला था।

"अब तुम चुप रहो।" अण्णा मारे गुस्सेके तमतमाकर बैसाखीपर उठ खडे हुए थे। मुझसे उनकी तरफ देखा भी नही गया था।

"आज तुम्हारी अक्का जिन्दा होती तो तुम्हारी यह हालत नही होती। लगता है तुमने बरसोसे आइना नही देखा—कैसी तो सूरत हो रही है, कैसे तुम्हारे बाल हो रहे है मै यह सब नही देख सकता। मै तुम्हारी सूरत भी ठीक कर दूँगा और तुम्हारे बाल भी! उठो और नहा डालो। याद हो तो सोचो कि पाँच साल पहले आज ही के दिन तुम्हारी अक्का मरी थी मैने खाना बनाकर रखा है· !"

अण्णा उठकर खट्-खट्, खट्-खट् करते चले गये तो उनके प्रति मेरे मनमे बहुत सारा क्रोध सचित हो गया। मेरा चेहरा तना-का-तना रहा। मै नहाया, मेरी आँखे खुली-की-खुली रही। मैने बाल ठीक किये, मेरा रूखापन गया नही ।

लेकिन थाली सामने रख डब्बेका ढक्कन खोला तो ढक्कनकी झन्न बादमें हुई। पहले कोई चीज़ मेरे मनके अन्दर जोरसे गिरकर टूट गयी—डब्बेमे वैसी ही तूप लगी रोटियाँ और वांगेकी भाजी" उनको देखने-भरसे, उनको छूने-भरसे हज़ार छोटी-छोटी स्मृतियोने मुझे घेर लिया जैसे किसी बहुत बडी सेनाके बीच मै निहत्था फँस गया हूँ।

मै फूट पडा—"अक्का ।" मुझसे एक कौर नही खाया गया। वह अकेला कौर बडा बेचारा मेरे मुँहके मुँहमे घूमता रहा—"अक्का ···मै अण्णासे गुस्सा नही करूँगा···नही करूँगा अक्का···नही करूँगा···· ।"

घूमकर देखा तो देहरीपर अण्णा बैठे थे और दीवारसे उनकी दोनो बैसाखियाँ टिकी थी।

बैसाखियाँ दीवारसे टिकी थी। मै जो एक ट्रेनकी ताकतके समान गुर्रा रहा था अब एक ज़रा-से सिगनलको देख रहा हूँ। वे बोल रहे है—"मैने जलगाँवमे तुम्हारी शादी तय कर दी है। अगले सोमवारको तुम्हारी शादी है

"अण्णा··· !"

"तुम छुट्टीकी सोच रहे होओगे कि इतने दिनकी छुट्टी कैसे मिलेगी ? तुम चिन्ता मत करो, मैने काकासे कहकर तुम्हारी ऐप्लीकेशन वी० टी० पहुँचवा दी है।"

"पर अण्णा····!"

"तुम इसलिए भी परेशान होओगे कि वहाँ मुम्बईमे रहोगे कहाँ ? इसकी भी चिन्ता मत करो तुम। वही रामवाडीमे दो खोलियोवाला मकान ख़ाली हुआ था। मैने पाँच सौ रुपये पगडीके दे दिये है सेठको और ताला लगा आया हूँ। वहाँका नम्बर सोलह है। जाते समय चाबी ले जाना। तुम्हारी जो खाट बाहर पडी थी, वह भी मैने खोलीमे रखवा दी है।"

"लेकिन अण्णा···!"

"पैर नही है तो तुम्हारे अण्णाका। तुम तो अपने पैरोपर खडे हो, जवान आदमी हो, अच्छी नौकरी है अब तुम्हारे पास अपना घर भी है···· जलगाँवमे तुम्हारे ससुर पुराने जमीदार है—खूब मवेशी, खेती-खलिहान लडकी अच्छी है।"

"लेकिन अण्णा मै · ।"

"अब तुम अगर चाहते हो कि तुम्हारी अक्काकी तरह ही तुम्हारे अण्णा भी मर जाये तो जो जी चाहे बोलो। हाँ, क्या कह रहे थे—मै·· !"

अण्णाका चश्मा उनकी नाकपर नीचे उतरा हुआ था। उनकी वह

एक मुद्रा मुझसे भुलाये नही भूलती। अण्णा नही जैसे कोई बत्तमीज एस० एम० हो।....

छक्-छक्-छक्,

छक्-छक्-छक्,

छक्छक्छक्छक्छक्छक्...

यह आवाज तो मेरे चलनेकी है। बिछे हुए है मेरे रास्ते तो और मै उन्हीपर लुढक रहा हूँ।

बाहर बाजत्रीवाले[७१] बैठे पे-पें कर रहे थे और मेरी शादी हो रही थी। जलगाँवके बहुत सारे लोग बाहर इकट्ठे हुए थे और नाश्ता कर रहे थे। सवेरे-सवेरे मेरी शादी हुई थी। लडकीको मैने अनमनेसे देखा था – काफी साँवला रंग' और मुझसे जरा स्वस्थ वह लगती थी। इतनी बडी नथ वह पहने थी कि उसका मोतियोवाला वृत्त चेहरेपर आधेके करीब फैला हुआ था। उन सब रस्म-रिवाजोको याद रखना तो दूरकी बात है, वे जब वर्तमानमे थे, वे जिस क्षण हो रहे थे, तभी मै चाहता था कि ये जल्दीसे जल्दी गुज़र जाये... जैसे किसी दुर्गन्धके पाससे हम नाकपर रूमाल दिये तेजीसे नही गुजर जाते है—वैसे ही वह सब कुछ था।

मुझे हँसी बादमे आयी कि मेरे ससुरने चार भैसे दहेजमे दे दी थी। उन चार भैसोकी याद करके मै अब भी हँस सकता हूँ। अक्ल काफी बारीक चीज होती है और किसी काम भी नही आती इसीलिए भैसे .. भैसे भी एक दो नही चार! मैने अण्णासे कह दिया था—"अभी इन भैसोको यही रहने दे फिर ले चलेगे ।" अण्णाने पहली बार मेरी बात मानी थी।

अपनी पत्नीसे मैंने कुछ समय बाद पहली बात यह कही कि अब तो शादीको सप्ताह-भर हो गया है, अब यह सोलह हाथकी साडी पहनना बन्द करो, सीधा-सादा दण्डिया[७२] पहना करो' उससे नही कहा मैंने लेकिन जाने क्यो सोलह हाथकी साडी पहनी कोई भी औरत मुझे ऐसी लगती है जैसे सिरपर मछलीका टोकरा भी रखे हो या फिर वह औरत अक्का लगती है''

मेरी पत्नीने जलगाँवके सिवा कुछ और नही देखा था—वह कभी कही नही गयी थी। वह भैसोके अलावा किसीको अगर जानती थी तो साँईबाबा-को। वह उनकी एक तसवीर अपने साथ भी ले आयी थी और भैसें तो उसके बापने दहेजमे दे ही दी थी।

मुझे केवल एक घटना याद है। वह घटना जब भी याद करता हूँ मुझे क्रोध चढ जाता है और वैसेमे जी यह चाहता है कि जो भी सामने आये उसे ही तोड डालूँ। घटना यह थी कि चौथी या पाँचवी रात मै उसे बाँहोमे भरकर करीब खीच रहा था। उसने खुश होकर सारा भार पीछे-की ओर छोड दिया था। न वह सँभल पायी और न मै सँभाले भी उसे सँभाल सका। गिरकर वह हँस दी थी और बोली थी—"कभी दूध नही पीया क्या?" उसका यह पूछना मेरे लिए काफी था 'उसका वह वाक्य पूराका पूरा एक तीखे काँटेकी तरह अब भी चुभा हुआ है''' मै उत्तरमे हँस दिया था और सारी रात यह जी करता रहा था कि चुपकेसे उठकर चला जाऊँ और ट्रेन पकड लूँ। ''

ट्रेन। और फिर लगातार यात्रा।
छक् - छक् - छक,
छक् - छक् - छक्,

छवछवछवछवछवछव···

हम जब रापवाडी पहुँचे तो दोस्त दावत लेकर ही माने। दावत दे तो दी लेकिन किसीकी कमी अखरती रही थी। मनमे एक बार आया भी कि किसीके हाथ कुरला खबर पहुँचा दूँ लेकिन फिर रुक गया। उसने तब, मेरे जाते समय प्रतीक्षा करनेकी बात कही थी न, सो अब भी वह प्रतीक्षा कर रही होगी, उसने घण्टो प्लैटफॉर्मपर मेरी प्रतीक्षा की है' इसीसे डर रहा था। मै वे वाक्य ही नही खोज पाता था जिनके द्वारा यह कह सकता कि इस-इस तरह मेरी शादी हो गयी है। ··

मुझे किसी रात नीद नही आयी ठीकसे। या तो उस खोलीमे कोई चूहा मर गया था या मेरी बीवीके सिरका तेल ही बसाता रहता था··· मैने एक दिन सफाई कर डाली लेकिन मरा हुआ चूहा जब कही नही मिला तो मै बेहद परेशान हो गया।

"यह किस चीजकी दुर्गन्ध आती है यहाँ ?"

"कहाँ, मुझे तो नही आती ?"

उसके इस उत्तरने मुझे चिढा दिया था। एक दिन आखिर कह ही दिया मैने—"सिरमे तुम यह कौन-सा तेल डालती हो ?"

"सरसोका ?"

"सरसोका क्यो ? मै कल तुम्हारे लिए सुगन्धका तेल लाऊँगा, वह डाला करो···!"

"नही। मुझे सुगन्धका तेल नही चाहिए, उससे मुझे उल्टी[७३] हो जाती है।" उसका उत्तर सुन मै चुप ही रह गया था।

उसको मैने फिर बम्बई भी दिखाया था। शायद इतवार था। हमे लोकल नही मिली थी तो जाने किस ट्रेनमे ही बैठ गये थे।

"क्यो ? तुमने पहले कभी किसीको दिल दिया है ?" उसके इस

वाक्यने मुझे चौंका दिया था। यह वाक्य-रचना अपने-आपमे इतनी घटिया लगी मुझे कि चलती ट्रेनमे मैंने चिढकर पूछा—"क्या मतलब ?"

"वो भाऊ नही रहता है पडोसमे। वो कह रहा था कि किसी लडकीके तुम चक्कर काटा करते थे ।" भाऊने यह कहा ? भाऊको इससे बात करनेकी क्या जरूरत ?

"और क्या कहा भाऊने ?" मैने पूछा तो यह ।

"वो तो जो कहा सो कहा लेकिन अच्छी थी क्या ? जलगाँवमे मैंने सुना था कि बम्बईमे घण्टेके हिसाबसे मिलती है लडकियाँ ।"

"क्या कह रही हो यह तुम ?" मेरी भौहे चढ गयी और आवाज़ तीखी हो गयी। जी चाहा कि एक थप्पड जमा दूँ इस औरतको।

"नाराज़ क्यो होते हो ?" उसका चेहरा भी तमतमा गया लेकिन सहसा ट्रेन रुक गयी तो मैने उसे चुप हो जानेको कह दिया था। नही चाहता मै कि लोग मेरी पत्नीकी बाते सुने। सण्डासका फाटक किसीने खोलकर बन्द कर दिया था—"जब ट्रेन खडी हो तो इसका उपयोग मत कीजिए।"···फिर ट्रेन चल दी थी और उस पंक्तिको आँखोमे लेकर मै पत्नीकी तरफ देखने लगा था।

मै घर जरूर चला जाता था लेकिन मेरे घर जानेकी कभी इच्छा ही नही होती थी। वी० टी० के ऊपरवाले कैफेमे बैठा रहता था या कही भी घूमने निकल जाता था। डर केवल एक यही रहता था कि कही वह कुरलावाली लडकी न मिल जाये। एक बार उसे कुरलामे देखा था लोकल-मे चढते···मै दादर ही उतर गया था उस दिन और फिर दूसरी ट्रेन वी० टी० गया था। दादरमे वही स्पोर्ट-शर्टवाला लडका मिला था। मै पूछ भी नही पाया उससे कि वह कहाँ क्या करता है ?

रेस्टके दिन यह जी चाहता है कि पहलेकी तरह ही दिन बिताऊँ : सबेरे फिफ्टी-एट डाउनमे नित्यकर्म और नहाना, कल्याणसे वी० टी०

तक। सवेरे सात बजे ट्वेण्टी-सेवन अपमे चाय और नाश्ता, वी० टी० से कल्याण तक। बारह बजे सिक्स डाउनमे खाना कल्याणसे वी० टी० तक। फिर··· फिर · जी यह करता कि वापस गुड्स क्लर्क हो जाऊँ। कितना लोड है भरा हुआ। मुझे अपने-आप ऐसा लगता कि पूरी गाडी मेरे कन्धेपर रखी है और अनलोडिंग कोई करवाता हो नही, जाने कहाँ गया, एण्ट्री लेनेवाला बाबू ··" यही सब सोचते-सोचते मै किसी दूसरेकी ड्यूटी ले लेता और व्यस्त हो जाता। घर लौटनेकी कल्पनामे-से भी मुझे सरसो-की दुर्गन्ध आती।

शायद स्पीड कम हुई। शायद ट्रेन रुकी। शायद कोई स्टेशन है। मैने झाँककर पूछा भी नही कि कौन-सा स्टेशन आया है। सोया हूँ तो सोया ही हूँ।

करीब साढे नौ बजे मै घर लौटा था उस रात। दूरसे देखा कि भाऊ बरामदेमे खडा मेरी पत्नीसे बाते कर रहा है।

"क्या रोज़ इनको इतना काम रहता है?"

"काम-वाम काहेका? लेकिन उसको रेलमे ही अच्छा लगता है। रेलमे ही खाना अच्छा लगता है, रेलमे ही सोना और ·।" भाऊ हँस दिया था या मुझे देख रुक गया था।

अन्दर मुँह धो रहा था तो पत्नीने एक बरतन गिराया, दूसरा गिराया, तीसरा गिराया।

"क्या बात है?"

"क्या तुम हमेशा उस लडकीके साथ ही रहते हो?"

"किस लडकीके?"

"खाओ मेरी कसम कि कभी उसके बारेमे सोचते भी नही।"

उसके तेवर देख मै हँस दिया—"सोचनेका क्या है, किसीके बारेमे

भी सोच सकते है । रेलकी नौकरी है मेरी। रोज सैकडो-हजारो लडकियो-को देखता हूँ।" ..

"तो मुझे जलगाँव भेज दो।"

"क्यो ? इसलिए कि तुम वहाँ जाकर मेरी हँसी उडाओ। अरे, तुम क्यो किसीके कहनेमे आती हो।"

"तो मै बुरी हूँ।"

"यह तो मैने कभी नही कहा ।"

मै इतना बोलकर चुप हो गया था।

दूसरी रात फिर मैने देखा कि भाऊ खडा है बरामदेमे और बात कर रहा है उससे।

"वह मेरा दोस्त है और बहुत अच्छा आदमी है, जरा उसको बाँध-कर ही रखना, नही तो फिर किसीसे प्रेम करने लगेगा।" भाऊ इतना ही बोला था और चला गया था।

मैने घरमे कदम रखते ही पूछा—"तुम भाऊसे क्या बाते करती रहती हो ?"

"कुछ भी, क्यो ? मैने तो कभी किसीके बारे नही पूछा आपसे ?"

"क्या मतलब?" मै जब यह पूछता हूँ तो यह स्पष्ट होता है कि मै इसके बाद कोई और बात बरदाश्त नही कर सकता।

"कुछ नही। कह रहे थे कि वह तो बडी सडियल लडकी थी, उससे तो मै भली हूँ ."

"अब तुम उस बातको लेकर कबतक रोती रहोगी ? अब मेरे जीवन-मे वैसी कोई बात नही। कपडेपर लगी धूलकी तरह मैने उस लडकीको झटक दिया है।"

"हाय तो मै भी कपडेपर लगी हुई धूल हूँ। .."

"यह मैने कब कहा ?"

"देखती हूँ कैसे झटकते हो मुझे। लो झटक दो मुझे।" वह वैसे ही गन्दे कपडो और सरमोकी बदबू सहित मेरे सामने आ खडी हुई थी—"झटक दो ना। झटक दो मुझे। देखती हूँ मै भी कि कैसे झटकते हो मुझे।"

"चुप क्यो नही रहती ?" मैने इतनी जोरसे ही उसे डाँटा कि आस-पासकी खोलीवाले उस आवाजको न सुन सके।"

"चुप रहते-रहते रामदास स्वामीको कथा पूरी हो गयी, अब और कब तक चुप रहूँ ? साँई बाबाकी कसम है तुम्हे जो न झटक दो मुझे। मै भी देख लूँगी तुम्हे—मैने जलगाँवका दूध पिया है, भुसावलके केले नही खाये हैं।"

मैने हाथ उठाया और तडसे उसके गालपर एक चाँटा जमा दिया। वह चीखने लगी—"सुनो भाऊ! ये मार रहे है मुझे।"

"भाऊ।" मैने दाँत पीसे थे, "भा—ऊ। चली जा भाऊके पास ''।"

मै दाँत पीस रहा हूँ। बडी जोर-जोरसे मेरे दाँत ऊपर-नीचे उठ-गिर रहे है।

छक् - छक् - छक्,

छक् - छक् - छक्,

छक् - छक् - छक्,

आवाज ऊँची, ऊँची और ऊँची उठती जा रही है जैसे पूनमकी रात गेटवेपर पछाड खानेवाला समुद्र हो—जैसे कोई जहर-भरा सर्प हो और किसकिसी खा-खाकर झपट कर रहा हो। जैसे ट्रेन बहुत लेट हो गयी है और तेज स्पीडपर आकर सारे वक्तको एक ख़ास ताकतके साथ दौड-कर पूरा कर लेना चाहती है। जब गुस्सा सिरहाने बैठ जाता है तो किसी बडी कडाहीमे तेल खौलने लगता है, जुहूमे आग लग जाती है, हैंगिंग गार्डन एकदम टूटकर टकीमे गिर जाता है और जी चाहता है कि रुके

हुए पहियोको अपने दोनो हाथोकी ताकतसे घुमा दे ·····। ट्रेन चल रही है तबकी तरह ही

छक् - छक् - छक् ,

छक् - छक् - छक् ,

छकछकछकछकछकछक··

लेकिन अब भी लग ऐसा रहा है जैसे कोई बहुत बडे चाकूपर धार कर रहा है—निसानका चक्का तेजोसे सर-सर, सर-सर घूम रहा है और चाकूको उसपर रख दिया गया है—खरर्र-खर, खरर्र-खर—कुछ चिनगारियाँ चिटखी हुई और एक चमकती धार··· · उस धारपर चलती हुई ट्रेन :

छक् - छक् - छक् ,

छक् - छक् - छक्,

छक् - छक् - छक् ,

छक्छक्छक्छक्छक्छक्

मै सारा हिसाब जोडकर वी० टी० से लोकलमे चढा और फुटबोर्डपर ही खडा हो गया था। वही एजिन जोर-जोरकी आवाज करता दो बार मेरे सामनेसे गुजरा था, बार-बार गुजरने लगा। एजिनके अन्दर ताकत रहती है न, एक इंच भी उसका आगे बढना और पीछे हटना उसके आगे-पीछे जुडे सारे डब्बोको हिला जाता है, आ जाये उसके रास्तेपर कोई, कटकर गिर जायेगा वह । मैने देखा कि भाऊ तेजीसे चढ गया है और एक हाथसे डण्डा पकडे फुटबोर्डपर झूल रहा है। यह कोई नयी बात नही, ऐसे झूलते हुए ट्रेनमे चलना अच्छा भी लगता है लेकिन आज तो भाऊको और भी अच्छा लगेगा। ·····

परेल निकल गया था, दादर निकल गया था, माटुगा भी निकल गया था···मेरा हाथ भाऊकी कुहनीपर जा पहुँचा था। फिर शीव और कुरला निकल गये ··घाटकोपरका धक्का[७८] लगा था और भाऊ अन्दर

जानेकी कोशिश कर रहा था। लोकल घाटकोपर रुके इससे पहले ही मैंने उसकी पकड ढीली कर दी थी और घुटनेके पीछे ज्यो ही मैंने एक धक्का दिया उसे कि नीचे जा गिरा वह। भाऊकी चीख तो नही सुनाई दी लेकिन लोकलमे बैठे लोगोका हल्ला ऐसे फैला कि पूछो मत। मुझे केवल इतना मालूम है कि सिगनल हुआ था और मै चल दिया था किसी भारी-भरकम एंजिनकी तरह…

किसीने जजीर खीच दी थी और ट्रेन रुक गयी थी। लोग उस गिर जानेवाले आदमीको बेचारा कह-कहकर दु.खी हो रहे थे। जब पाँवोमे रेलका पहिया फिट हो जायेगा तो रोज ही लोग एक-दूसरेको कुचलते रहेंगे और जब दिमागमे बेलेन्स व्हील फिट हो जायेगा तो किसीके कुचल जानेपर ट्रेन इस तरह रुका नही करेगी।…

"अरे, ये तो भाऊ है !" यह वाक्य मै ही बोला था। मैंने ही भाऊके चेहरेपर पानी छीटकर उसे होशमे लानेकी कोशिश की थी। मै ही उसे अस्पताल ले गया था। भाऊके ट्रेनमे-से गिर जानेपर मै सबसे अधिक दु.खी था। मै दो दिन तक जबतक भाऊका ऑपरेशन नही हो गया, अस्पतालसे घर नही लौटा था।

. होश आनेपर भाऊ पहला वाक्य बोला था—"आज मला पगार मिलाली आहे न, त मी त घरी चाल्लो। फक्कत दोन गाडी राह्यली आहे त शेठ घेणार इण्ट्री…!"[५५] मै फटी हुई आँखोसे भाऊकी तरफ देख रहा था और भाऊ हँस रहा था। मेरी धडकन पिस्टन-गीयरकी शटाक्-शट, शटाक्-शटमे बदल गयी थी। भाऊ तबसे हँस ही रहा है, हँसी बन्द ही नही होती उसकी, वह थकता ही नही हँसते हुए। जब भी मिलता है यही कहता है कि दो गाडियोकी एण्ट्री लेना रह गया है, साल्ला सेठ लेगा एण्ट्री। मुझे आज पगार मिल गयी है और मै तो घर जा रहा हूँ।…

ट्रेन बडी देरसे कही रुकी नही है और मेरी आँखे भी रात-भर हो

गयो है लेकिन लगी ही नही । जैसे-जैसे स्टेशन पीछे छूटते जा रहे है लग रहा है कि मेरे बाल सफेद होते जा रहे हैं । बीते हुएका इतना बडा बोझ बालोको काला भी कैसे रहने दे । कोई नीचे बता रहा है कि सामने सांचीका स्तूप है । सवेरेकी धूपमे वह एक बुलबुलेकी तरह सोया है । हड्डियोको रखनेके लिए इतना बडा सन्दूक बना दिया । हड्डियाँ थी तो उन्हे जला देते, गाड देते या बहा देते ' मै कहता हूँ कि ये सब डायवर्ज़न है । लेकिन अपने सिरहानेसे इस स्तूपको ही कैसे हटाऊँ अब ? ऊपरसे यह इतना बोझ और ट्रेनका लगातार शोर

छक् – छक् – छक्,

छक् – छक् – छक् ,

छक्छक्छक्छक्छक्छक्' ' ''

ऐसे ही लौटते समय मै वाडोके पिछले रास्तेसे अन्दर चला गया था । दूरसे देखा कि मेरी खोलीके सामने बरामदेके खम्भोसे चार भैसें बँधी है । शामका समय है और कोई आदमी एक बडे भाण्डे[७६]मे दूध दुह रहा है । जरा और गौरसे देखा तो पहचान गया कि वे ससुर है मेरे । मेरे कदम रुक गये । थोडी देर बाद मेरी पत्नी भी आ खडी हुई थी उनके पास । इतना ही नही एक कोई आया तो मेरी पत्नीने पाव-भर दूध नाप-कर दे दिया । यानी दूधकी दुकान खोल ली गयी है । रामवाडीमे दो-चार लोगोने भैंसें पाल रखी है और उन भैसोके गोबरसे मच्छर पैदा होते रहे है । पीछेवाली खाडी ही क्या कम मच्छर पैदा करती है कि गोबर करनेवाली भैसें और पाल ली जायें ।

जाने मुझे भाऊकी हँसी सुनाई दे गयी, या सरसोके तेलकी बदबू मुझ तक आ गयी या मैने किसी भैसको गोबर करते देख लिया या अपनी पत्नीको फिर सोलह हाथकी साडी पहने देख मछलियोका खयाल आ गया

या कुछ और हुआ कि मैने कदम लौटा लिये। ट्रेनकी तरह मै छक्-छक्के किसी विशेष क्रमसे आगे नही बढा एकदम तेज़ीसे चला और ट्रेनमे बैठ गया। रात ट्रेनमे ही सोया, ट्रेनमे सारा दिन भी काटा, सारे पुराने क्रमको दुहराया, खूब खाना खाया और खिडकीसे लगकर शीशा गिराये बैठे-बैठे गुजरते हुए नदी-पहाड-पेड-पौधे-खेत-खलिहान देखता रहा।

मै वी० टी० उतरा तो वह मेरे सामने थी। वही कुरलावाली लडकी – वही सगमरमरके शरीरवाली – अर्धनग्न, अन्धी, कटे हुए हाथोवाली।

"नही, घबराओ मत।" उसने मराठीमे कहा था – "वह तो मुझे तभी पता चल गया था। कर ली शादी तो कर ली। कोई मुझसे वादा तो किया नही था शादी करनेका। मै एकाध हफ्ते तक खाना पकाकर आपकी राह देखती रही, फिर राह देखना बन्द कर दिया। अब भी कभी-कभी गलतीस तीन भाकर ज्यादा बन जाती है, बन जाती है तो बन जाती है, उन्हे मै शामको खा लेती हूँ…।"

मै उसके सामने खडा था, जैसे ज़बान ही नही हो मेरी। फिर उसने पर्स खोला था और एक पैकेट मुझे दे दिया था – "आपने छह प्रीमियम जमा करवाये थे – ये तीन सौ रुपये। यह पेड-अप पॉलिसी है आपकी…।"

मै कुछ कहूँ इतनेमे वह चली गयी थी…और कहता भी तो क्या कहता उससे ? कैसे कहता कि अण्णाने मेरी पटरी बदल दी और ज़बरन शादी कर दी और मेरी बीवी फूहड है और उसका बाप भैसें ले आया है ?…

मैने एक एस्प्रेसो ले लिया था और प्यालेको होठोसे छूता रहा था। एक कोई एजिन मेरे आस-पास घूम रहा था, एक लम्बी ट्रेन मेरे गिर्द चक्कर लगा रही थी। मै उस पार उस पटरीके पास जाना चाहता था

लेकिन कैसे जाता, जिधर भी क्रॉस करनेको झपटता, दौडती हुई ट्रेन रास्ता रोक देती थी। केवल दो ही रास्ते मुझे दिखाई दे रहे थे या तो मै इस दौडती ट्रेनके नीचे आ जाऊँ या फिर लपककर ट्रेनमे चढ जाऊँ। मै उस आस-पास चलती आवाजके बीच खड़ा सोचता रहा, सोचता रहा और जैसे किसीने मुझे धक्का दिया हो मै ट्रेनमे चढ गया था। कोई बडा पुल सामने था

खड - खड - खड,
खड - खड - खड,
खड - खड - खड······

मै अनुभव कर रहा हूँ कि ट्रेन अब किसी टनलमे-से गुज़र रही है—दिन-जैसा दिन है लेकिन एक अँधेरेको ओढे हुए हम चल रहे है और अँधेरा यह भी नही देखने देता कि हम जा कहाँ रहे हैं·

अँधेरा, अँधेरा और अँधेरा। और उस अँधेरेमे मै आँखें मूँदे भाग रहा था। यह भाग जानेकी इच्छा बरसोसे मनमे सोयी है। अण्णाने चश्मा नाकपर नीचे उतारकर ट्रेनमे डाँटा था तब, मुझे गुड्सकी ट्रेनिगपर भेजा गया था तब, मै कर्नाक ब्रिजपर अनलोडिग करवाता था तब, मै रामवाडीके 'ई' ब्लाकवाले बरामदेमे पैताने कुत्तेको लेकर खाटपर सोता था तब, पुणेमे जब उसके दादासे मिला था तब, जलगाँवमे मेरे लग्नकी बाजंत्री बज रही थी तब, उसने सोलह हाथकी साडी पहनी थी तब, उसके बालोसे सरसोके तेलकी बदबू आयी थी तब···तब ही भाग जाना चाहता था मै तो लेकिन अभीतक पटरी नही मिली थी, अभीतक मै गुर्राकर ठण्डा हो जाता रहा और लोको यार्डमे जाकर सो जाता रहा लेकिन अब चल दिया हूँ· छक् छक्-छक्-छक्-छक्-छक्, छक्छक्छक्छक्छक्छक्··

फिर अँधेरा घिर आया है और मैं लेट गया हूँ। पता है मुझे कि भुसावल आ गया है। भुसावलमे ट्रेन खूब देर पडी रहती है, एंजिन पानी लेता है न, चाहूँ तो उतरकर खाना खा सकता हूँ या उतरकर देखूँ तो किसी भी परिचितसे बातें कर सकता हूँ लेकिन मन नही हो रहा है किसी बातको भी।

यही वह जगह है जहाँ मेरे अनुभवोने घुटने चलना सीखा, यही मेरे अण्णा रहते है, एक दिन उनकी बीमारीकी खबर सुनकर यही मै दौडकर आया था। भुसावल आ जाना और लौट जाना मेरे लिए खेलकी तरह था और अब उनके प्लैटफॉर्मपर उतरनेमे, उसपर पैर रखनेमे भी एतराज है मुझे। मै किसी कटे हुए पैरसे, किसी बैसाखीसे, किसी पितासे नही मिलना चाहता। मैने सरेण्डर कर दिया है इस आवाजको। इस आवाज़से मै अपनेको अलग नही करना चाहता। झाँककर देख रहा हूँ कि मेरे बचपन-वाला वही छोटा पुल मेरे पहियोके नीचे है, एक-दूसरेसे दोनो दूर-दूर गुजर रहे है और शोरमें डूब रहे है

खड - खड - खड

खड - खड - खड

खड - खड - खड

....

यह कुछ याद नही कि मै सोता रहा या जगता रहा या कही भी किसी बिन्दुपर दृष्टि जमाये स्थिर बैठा रहा, याद है तो केवल इतना कि एक घने अँधेरेमे ट्रेन रुकी थी और तेज़ ठण्डी हवा चल रही थी। मै उतरा था और कुलीने जब सामानको पूछा था तो मैने अपना सफेद कोट पहन लिया था और वह सलाम करके दूसरे डब्बेमे झाँकने लगा था। उसी ट्रेनसे वे लोग भी उतरे थे जो कश्मीर जाना चाहते थे...मेरा जी चाहा था कि चला जाऊँ कही ऊपर ही। ऊँचे-ऊँचे पेडोकी छाँह और बर्फ देख-देखकर

कुछ दिनो तो उन्हे जी सकूँगा। फिर मैने चाय पी थी एक प्याला और स्टेशनकी बेचपर बैठ गया था। इस तरह मै कई-कई बार बैठा हूँ, ज़रा देर आराम करनेके लिए या किसीकी प्रतीक्षाके लिए, लेकिन उस दिनका वह बैठना ऐसा था जैसे बम्बईसे पठानकोट पैदल चलकर ही आ पहुँचा होऊँ। इस लम्बी यात्राके बाद मेरे मनमे क्रोध ही नही रह गया था—न गोबर करती भैसोके प्रति क्रोध, न कटे हुए हाथोके प्रति क्रोध, न वैसाखीवाले अण्णाके प्रति क्रोध····। और पठानकोट निश्चित रूपसे भागकर आते हुए भी मैने वैसे ही सहज भावसे पास बनवा लिया था। मेरी हालत कुछ थी तो यह कि जैसे लोकोमे खडा एंजिन होऊँ, पता नही कहाँ किस दिशा इसे जाना होगा। शायद जब ट्रेनमे चढा था तो मै कही जर्नी ब्रेक करनेके मूडमे था, उतरता तो कही भी उतर जाता—आगरा, दिल्ली, अमृतसर या और कही भी। लेकिन कही भी उतरनेको मन नही हुआ। यह भी नही कि मै वहाँ अपनी इच्छासे उतरा था। मै तो ट्रेनमे बैठा रहना चाहता था। चाहता था कि पहिये लुढकते ही रहे और कही रुके ही नही। लगातार छक्-छक्-छक्, छक्-छक् छक् पृष्ठभूमिमे चलती रहे और मेरा शरीर रेलके ही किसी हिस्सेकी तरह हरकत करता रहे। यही सब सोचता रहा था और शायद नीद आ गयी थी—नीद भी क्या अनिवार्य स्टॉप है···

हूँ। यह जलगॉव है। मै ऊपरवाली बर्थपर लेटा हूँ सो लेटा ही हूँ। क्षण-भरको भी हिल नही रहा हूँ लेकिन ट्रेन किस-किस जगहसे गुजर रही है इसे अपनी साँसोकी तरह महसूस कर रहा हूँ। एक दिन इसी जलगाँवमे मेरे लग्नकी बाजन्त्री बजी थी और यहीसे चार भैसोका दहेज लेकर मै घर लौटा था। पता नही लोगोको ब्याहका दिन और पहली रात कैसे याद आती है मुझे तो उनकी याद ही चुभन लगती है। वे घटनाएँ जब वाकई गुजर रही थी तब भी मुझे उनसे शिकायत थी कि जैसे-तैसे गुजर जायें

तो पाप कटे ''लेकिन पाप कहाँ कटा ? जैसे पानी बरस जानेके बाद कीचड हो जाता है, वैसे ही यह अतीत है—सडककी सारी गन्दगी पानीमे —गूँध दी गयी हो जैसे। लेकिन मै उसमे पैर गन्दे नही करूँगा—ट्रेनकी तरह जरा देरमे ही छक्-छक् करता गुजर जाऊँगा।

होटलवाले सरदारने पूछा था—"बाश्शा थ्वाडा पिण्ड[७८] कित्थे ?" जानता था उसका प्रश्न क्या था लेकिन उत्तर नही दे सका। एक जी चाहा भी कि कह दूँ कलकत्तासे आया हूँ या बतला दूँ अहमदाबादका रहनेवाला हूँ ''। जाने क्यो अपने नामके साथ मुम्बई जोडनेको मेरा मन नही था ।

सरदारने दो-चार सवाल और पूछे थे। यह भी कहा था श्रीनगर या पहलगाँव चला जाऊँ, यहाँ पठानकोटमे क्या रखा है ? फिर शायद मेरा चेहरा देखकर समझ गया था कि बाबू बात नही करना चाहता और चला गया था। वह जब चला गया था तो मेरा जी चाहता रहा था यह कहनेको कि थोडी और पीना चाहूँगा ''''

मेरा गला सूख रहा था। ट्रेनकी छक्-छक्-छक् कभी सहसा गूँज उठती और कभी लगता कि मै डब्बेमे बैठा हूँ और डब्बा कट गया है या ऐसा लगता कि एंजिन जुडा है और उसकी गुज़रती हुई खडग-खटर, खडग-खटर मेरी नस-नसमे-से गुजर रही है। इतना ही नही, सरदारने लाइट ऑफ कर दी तो भी मै आँखे खोले बैठा रहा। सोच रहा था किसे याद करूँ ? जाने कहाँसे खट्-खट्-खट्-खट्-खट्-खट् चलती हुई आयी और मै उठ बैठा।

"अण्णा।" अण्णा बैसाखीपर खुदको सन्तुलित करते मेरे सामने खडे हो गये। उनका चश्मा नाकपर थोडा नीचे उतर आया था।

"अण्णा! अब मै और शादी नही करूँगा, नही, अब नही करूँगा शादी। तुम मुझे बैसाखीसे पीट लो लेकिन मेरी शादी मत करवाओ।

मै तुमसे ज़िन्दगी-भर डरता रहूँगा। तुम्हारा नाकपर नीचे उतरा चश्मा मेरे दिमागपर हमेशा अक्स रहेगा, मै अब दास-बोधके सवाल नही पूछूँगा अण्णा...... तुम चले जाओ, अण्णा...!" इतना कहते मै रो-दिया था।

सहसा बैसाखी उड गयी और अण्णा भी अदृश्य हो गये। मै तो यहाँ अज्ञातवासके लिए आया हूँ। यहाँ, इस विराटनगरमे मुझे किसीकी जरूरत नही। ...

कुछ सोच रहा था कि अक्काने मेरे सिरपर हाथ फिरा दिया—मेरे लिए बनाया हुआ डब्बा खूब तूप लावलेली पोली अनखिण वाग्याची भाजी..... लेकिन मुझे भूख तो है ही नही और इसीलिए मै कोयले बीनने नही जा सकता। कौन जाने कोयले बीनने जाऊँ और ट्रेन मुझे कुचलती हुई गुजर जाये .

"भाऊ, तुम कब आये पठानकोट ?"

"पगार मिली कल मुझे और अनलोडिगके लिए एक भी गाडी नही थी और आयेगी भी गाडी तो सेठ लेगा एण्ट्री।" 'मैने कोई ठेका थोडे ही लिया है !"

"अच्छा है भाऊ, तू भी आ गया....।"

"लेकिन ट्रेनमे तो चल।"

"क्यो ?"

"आज मैं तुझे धक्का दूँगा। आज मै तुझे गिराऊँगा चलती ट्रेनमे-से। मै तो मौका ढूँढ रहा था। ."

"नही। नही भाऊ। तू पागल हो गया है। मैने तुझे नही गिराया। तू तो अपने-आप गिर गया था—मै क्यो तुझे धक्का देने लगा ?"

"मै भी मुझे धक्का थोडे ही दूँगा। लेकिन चाहता यह हूँ कि हम दोनो एक ही ट्रेनमे बैठे हो और तू चलती ट्रेनसे नीचे गिर जाये ..।" यह कहकर भाऊ मेरी ओर सधे हुए कदमोसे बढने लगा था।

"भाऊ "।" मैने जोरसे उसे डाँटा था और रक्षाके लिए पीछे हटा था तो टेबिलपर रखा ग्लास नीचे गिरकर टूट गया था। लाइट जल गयी थी और सरदारने आकर पूछा था कि मै डर तो नही गया।

छक् - छक् - छक् ,
छक् - छक् - छक्,
छक्छक्छक्छक्छक्छक् ....

मैंने आदतके मुताबिक झाँककर नीचे देखा है। कोई पानी पी रहा है और वह जिस फ्लास्कमे-से पानी निकाल रहा है उससे उनका ग्लास बार-बार टकराये जा रहा है। ऐसे कितने-कितने ग्लास मेरे जीवनमे आये लेकिन किसी एक घूँटसे ऐसा किक नही मिला कि जो इन आँखोसे नही दिखाई देता है वह दिख जाता। हर ग्लासमे एक मरा हुआ दिन लाश-की तरह तैरकर ऊपर आ जाता है। एकको निकालकर फेको तो दूसरा आ जाता है और दूसरेको फेको तो तीसरा ... और पी जाओ तो वही दिन सिरपर चढ जाता है। इसी सबसे बचनेके लिए कम्बल ओढ लिया है मैंने और तख्तेसे कान लगा लिये है कि आवाज दुहरी-तिहरी होकर सुनायी देती रहे। लेटा हूँ लेकिन मेरी मन.स्थिति एक बैठे हुए आदमी-की है।........

सवेरे इसी तरह बैठकर चाय पी रहा था और सोच रहा था कि बीता हुआ एक-एक दिन मुझे मार डालनेके लिए पीछा कर रहा है। कभी सपनोके रूप, कभी खयालोके रूप, कभी यादके रूप ..। लेकिन सँभालकर रखनेके लिए एक चीज नही, एक चेहरा नही। वह कल्याण-का घर....उस घरसे पहले पत्नीका खयाल आता है, और पत्नीसे पहले भैसोका ..गोबर करती हुई भैसे, सिरपर रखी मछलियाँ और बदबू फैलाता सरसोका तेल। कही कोई चेहरा नही बनता .. अण्णाके द्वारा

मेरे जीवनमे जोडी गयी लकीर पर शेण ही शेण बिखरा है—शेण और उसपर भिनभिनाते मच्छर··· । जबरन किसी चेहरेको कोई अपना कैसे बना सकता है ? मेरे लिए तो पत्नी एक गन्दी परम्परा है, खाडीपर-फेका गया कचरा है, प्लैटफॉर्मका टिकिट है

चायके आखिरी घूँटमे बहुत सारी पत्तियाँ आ गयी थी और मै बडी देर तक उन्हे थू-थू कर थूकता रहा था ।

फिर एक चेहरा और बनानेकी कोशिश करता रहा था । एक ढेर सगमरमरका, कुरलाकी खोली, तीन भाकर, दो हाथ और उनके बीच जलता हुआ दीपक···दो फूटी हुई आँखे, दो कटे हुए हाथ, एक अधनगा शरीर····न तो खरगोशवाला मेजपोश कही है, न ही फूलदानमे रखे गये आँकडे हैं तो दादाकी आँखे, ऐसी बूढी और जासूस आँखे जो अपनी लडकीके शरीरपर किसी दूसरेके फिगर-प्रिण्ट्स ढूँढ सके··· ।

फिर मै कतई नही रोया । केवल यह दु ख मेरे मनमे ज़रूर चलता रहा था कि एक चेहरा तो मेरे पास होता जिसे इतनी दूर आकर मै याद कर सकता···दु खमे उसके सामने दु खी हो सकता, सुखमे उसके सामने मुसकरा सकता । एक सगमरमरका चेहरा था तो अण्णाने छीन लिया, एक परम्पराका चेहरा था तो भाऊने छीन लिया, एक फ्लैशबैकका चेहरा था तो पत्नीने छीन लिया····इन सबके जो टूटे हुए टुकडे थे उनपर ट्रेन चल गयी··· और वही ट्रेन मुझे पकडकर यहाँ छोड गयी····

छोड ही नही गयी, मुझे लाद लिया है और लिये चल रही है ·
छक्-छक्-छक्,
छक्-छक्-छक्,
छक्छक्छक्छक्छक्छक्······

आज यह आवाज़ मै इस उम्रमे जगते हुए सुन रहा हूँ और इसी आवाज़को मैने अक्काके पेटमे भी सुना था । एक-एक स्टेशन अबकी तरह

ही गुजरता चला जा रहा था

शिरसोली — महसावड,

महसावड — माहेजी,

माहेजी — परधाडे,

परधाडे — पाचोरा,

पाचोरा — पाचोरा,

पाचोरा — पाचोरा,

इसी, इसी रास्ते मै कही पहली बार रोया था। इसी रास्ते पहली बार मैने आँखे उघारकर शीशेके पार गुज़रते दृश्योको देखा था। इसी रास्ते मैने थर्ड क्लासकी सख्त लकडीको पहली बार छुआ था। तब भी इसी तरह ट्रेन चल रही थी जैसे कि अब चल रही है।

स्टेशनसे जो सीधी सडक जाती है उसपर मै एक बार दाहिने मुडा था और एक बार बाँये घूमा था — इससे अधिक मुझे कुछ याद नही।

बाहरसे वह मकान बेहद टूटा-फूटा और गन्दा लग रहा था लेकिन अन्दरका कमरा ऐसे सजा हुआ था जैसे फ्रेममें जडी तसवीर हो। जैसे रगीन लाखका घर हो। तीन कुरसियाँ, एक गोल मेज़, उसपर मखमलका मेजपोश, एक पलग, जिसके दोनो तरफ चौडाईमे रथके दो पहिये बने थे। मसहरी ऊपरको उठा दी गयी थी····जो आदमी एक चेहरेकी तलाशमें घूमते-घूमते खुद पहिया हो गया हो, जो आदमी वार झेलते-झेलते सख्त हो गया हो उसके लिए यह कमरा उन दो घूँटोकी तरह था जो किसी बातको भूलनेके लिए नही, किसी बातको याद करनेके लिए पीये जाते है।

वह मखमलवाला सलाम, वह उस सलामका जामुनिया रंग, वह उस रंगपर बना हुआ बूटा। मुझे जैसे उठाकर उस पठानकोटसे कही और ले गया था। बातोके वे टुकडे जैसे पख हो, जिनपर बैठो तो चीडकी फुनगी तक उड सको

"क्यो बाबू, आप कहते है यह रेशम और मखमल और यह सगमरमर आपको खूब पसन्द है ?"

"हाँ, कहता तो हूँ।"

"तो क्या कभी मेरी बातोके रेशम, मेरे कुरतेके मखमल और मेरे बदनके संगमरमरका कोई टुकडा ' कोई''''कोई कटपीस भी आपको अबतक नसीब नही हुआ ?"

मै उत्तरमे हँस देता था।

"क्यो बाबू, कल तो आप उस सितारपर झूम उठे थे, उस एक सतरपर, उस एक 'मुझे भूल जाने दो' पर आपने दस रुपया निछावर कर दिया था '।"

"क्या कहना चाहती हो ?"

"तो मेरे पूरे नगमेपर क्या निछावर करोगे ?"

"अपने आपको''' ।"

और वह हँस दी थी और बड़ी देर तक हँसती रही थी।

वही उजेला। वही मखमली सजावट।

"कभी तुम्हे यह मालूम हो जाये कि मै वह नही हूँ जैसा दिखाई देता हूँ, तो ?"

"तो मुझे कोई एतराज नही। अगर आप यह कहे कि आप शादीशुदा है, तो होगे। अगर आप यह कहे कि आपकी कोई मेहबूबा है, तो होगी भाई। अगर आप यह कहे कि मै कल मर जाऊँगा, तो मै कौन होती हूँ रोकनेवाली' ।"

"तुम्हे किसी बातसे एतराज क्यो नही है ?"

"मुझे एतराज इसलिए नही है कि मै उन सबसे बड़ी हूँ जिनको छोड़कर आप आये हैं या जिन तक आप जाना चाहते है'''' ।"

और सच तो यह कि वह चेहरा कई-कई चेहरोके ऊपर चमकता है।

जहाँ एतराज नही, जहाँ सन्देह नही, जहाँ दासबोध नही, जहाँ एलायसी नही ···एक सौदा है, एक पिस्टन-गियर दिलमे लगा है, हर धडकन शटाक्-शटकी ध्वनिमे बिखरती है ।

एक-पर-एक,

एक-पर-एक,

एक-पर-एक ।

एकके ऊपर दूसरा, दूसरेपर तीसरा, तीसरेपर चौथा· · असख्य पीपे, गन्दे और घिनौने । एक-एक इच जगहपर गिरनेसे बने हुए घोचे और घुम्मट 'सारे शेडमे फैला हुआ तेल, बेलतेल' पानीके साथ मिलकर उस टरपेण्टाइनसे बनती हुई पेशाब-जैसी लकीरें—कही बरसाती केचुओके जिस्म-जैसा इन्द्रधनुष, कही काले डम्मरकी शक्लका बादल, कही रिसते हुए पीब-जैसा दूध, कही बिखरी हुई चायका कीचड···बूँद-भर बेलतेल दो बूँद पानीमे मिल जाये तो कभी साफ न किये जानेवाले सार्वजनिक पेशाब-घर-जैसा वातावरण बना देता है । उसने मेरे हर विचारको एक उबकाई बना दिया था ।

और इस सबके बीच बैठा मै पीपे गिनवा रहा होता था—एक, दो, 'तीन ·· तीन सौ, तीन सौ एक, तीन सौ दो, तीन सौ तीन' "

किसीने पूछा था—"क्यो बाबू, जहाँ थे वहाँ कोई नौकरी नही थी क्या ?"

मैने कहा था—"वहाँ कोई नौकरी होती तो यहाँ क्यो आता ?"

"तो कोई अच्छी नौकरी क्यो नही ढूँढते ?"

यह प्रश्न टँग गया था मेरे सिरपर । मै चाहकर भी पहलेकी नौकरी-को याद नही कर रहा था । सच तो यह कि किसीको याद नही कर रहा था और यह भी समझ रहा था कि ये अच्छे लक्षण है ।····

उसी एक-पर-एकको धुनमे यह ट्रेनकी छक्-छक्-छक् चल रही है ।

मैं इस आवाज़को तो झटक सकता हूँ लेकिन उस टरपेण्टाइनको नहीं। वह घृणा पानीमें भँवरकी शक्ल पा गयी है और मैं उसमें कैद हूँ।

एक दिन मैंने पाया था कि मैं सबको भूल चुका हूँ, बाकी है तो एक परदा। एक कोई चेहरा है मेरे पास, जिसे मैंने रुपयोंसे खरीदा है, वही मेरा है—उसका शरीर भी संगमरमरका है, वह अर्धनग्न ही नहीं पूर्ण नग्न है, किसी भी सिद्धान्तके लेफ्टसे घूमकर वह मुझ तक नहीं आती, सीधे आ जाती है। उसके दोनों हाथ सलामत हैं: एक सलामके लिए, दूसरा रुपया वसूल करनेके लिए। उसकी दोनों आँखें साबुत हैं: दोनोंसे वह देखती है कि कौन आया और कौन गलीमें-से गुजर रहा है।

वह मूर्ति, टाईवाले सरके घर जो टेबिलपर रखी थी, शायद नीचे गिर जानेके कारण वैसी हो गयी होगी—उसके हाथ टूट गये होंगे, उसकी आँखें फूट गयी होंगी।...

मैं हर दिन अलग-अलग पुलियापर जा बैठता था। मैं हर रोज़ अलग-अलग होटलमें चाय पीता। मेरे जीवनका केवल एक ही क्रम था और वह था लगातार भटकना। हर जगह मुझे जैसे चुभती थी, हर जगह मुझे काँटेदार लगती थी। जैसे मैंने एक बडा टुकडा धरतीका खरीद लिया था और उसमें हल चला रहा था। हर जगह कोई चीज फलमें फँस जाती थी और उसे खींचनेपर पता चलता कि वह किसी मरी हुई चीजका अस्थिपंजर है।

मैं जब-जब सिर उठाकर ऊपर देखता बादलके टुकडे यहाँ-वहाँ लटके होते, वे जब-तब मिल बैठते और बरस लेते—जैसे किसीके घर मातम-पुर्सीपर आनेवालोंका ताँता लगा हो और बार-बार रोनेवालियाँ मुँह दे रही हों।

खाना – सोना – जगना ये सब आदतमे आ गये थे, सही अर्थोमे मेरे जीवनकी जरूरतसे इनका कोई सम्बन्ध नही था ।

मुझे हर समय ऐसा लगता रहता जैसे परदे ही परदे लटके हो आस-पास । और उन परदोको तैरनेकी स्थितिमे हटाता-हटाता मै थक जाया करता था, लेकिन परदे थे कि हटते और फिर लटक आते ।

एक शामकी बात है कि बरसते पानीमे भीग गया, भीगा तो भीग ही गया । मेरी इच्छा हो रही थी कि पानी बरसता ही रहे—बरसता ही रहे । मै किसी भी वर्तमानको स्वीकार कर लेना चाहता था । कोई भी क्षण मुझ डूबतेके लिए तिनकेकी तरह था ।

मैने उस शाम तै किया था कि अब वह परदा, वह मूर्तिवाला परदा भी शेष नही रहेगा । वह परदा मुझे इस हकीकतसे उठाकर और कही ले जाता था और मै और कही नही जाना चाहता था । किसी भी अन्दर खुलनेवाले दरवाजेकी ओर मै रुख नही करना चाहता था । मै जहाँ था वही रहना चाहता था, जिसे देख रहा था, उसे आँखोसे अलग नही करना चाहता था । सामनेवाला क्षण चाहे जितना सक्षिप्त हो, मै हाथ-पैर समेटकर उसीमे रह लूँगा, उसीमे उठ-बैठ लूँगा, जैसे यह सब मेरे अन्दर ही अन्दर तै हुआ था ।

वही उसका फ्रेममे जडा हुआ कमरा । वही उसका मखमली रूप । वे ही उसकी साबुत आँखें । सहीसलामत हाथ ।

"आज मै एक खास बात चाहता हूँ ।"

"खास बात ? जो है सो हाज़िर है ही ।"

"नही ।"

"फिर — ?"

उसके प्रश्नने मेरी आँखे उठा दी थी । उसका मुसकराता चेहरा न प्रश्न था न उत्तर, न जिज्ञासा न समाधान, लेकिन वह अपने-आपमें साफ-

साफ ऐसी लकीरे था जिनपर पुणें टाइप गालकी हड्डियाँ नही थी और न ही जलगाँव-जैसी नथ पहनी हुई नाक ! वह चेहरा अगर मेरे सामने रहता तो उसपर-से होकर कोई रास्ता कल्याण और कुरला तक नही जा सकता था। मै नही चाहता था कि वह टूटी-फूटी मूर्ति बार-बार मेरी आँखोमे आकर उन्हे गन्दा करे।

"खास बात क्या हो सकती है ?"

"जबान दो।"

"दी।"

"तुम आज कमरेकी लाइट नही बुझाओगी, अँधेरेका परदा नही टाँगोगी मेरे सामने।"

"क्यूँ ?" वह जैसे तडप उठी।

"मेरी जेबमे सौसे ज्यादा रुपया है, सब ले लो और उजेला मुझे दे दो।"

"नही, यह मै·· "

"तुमने जबान दी है।"

वह चुप थी, बिलकुल चुप।

जब मै इसे खरीद लेता हूँ, जब मै इसके साथ होता हूँ, यह अँधेरा ले आती है कमरेमे—और उसी क्षण इसका चेहरा कही चला जाता है।·· तब उस अँधेरेमे उस कुरलावाली लडकीका चेहरा हलकेसे चमकने लगता है, उसे झटककर अलग करता हूँ तो मेरी पत्नीका चेहरा मेरे शरीरसे लग जाता है, उसे हटाता हूँ जबरन तो टाईवाले सरके घर टेबिलपर रखी वह अन्धी मूर्ति अपने चुम्बनोसे मेरे ओठोपर सगमरमरके धब्बे बनाने लगती है। · अब मै इन सबसे कटा हुआ हूँ, अलग दूर हूँ, मेरा इन अन्दर खुलनेवाले दरवाज़ोसे, बीते दिनोसे कोई वास्ता नही। यह पठानकोट, बेलतेलकी नौकरी और यह खरीदा हुआ मखमल मेरे लिए काफी है। अब मेरी यही पटरी है, मुझे इन्हीपर चलना है, कही नही

भटकना है। सब अब निश्चित है, साफ है, जो बिखरा हुआ था उसकी धूल उड चुकी है। ·

तब मैने उसे अपनेसे सटा लिया था—केवल उसका उस क्षणका चेहरा मेरे सामने था—वह अँधेरा परदा डायवर्जन था, वह अतीतमे ले जाता था। जहाँ अँधेरा, सीलन, बदबू और वैसी ही सब चीजें है।

जो उजेला उसके चेहरेपर चमक रहा था वही उसकी नगी बाँहोपर चमकने लगा और वहाँसे भी वह आगे बढकर उसके पाँयचोको सहलाने लगा। उसका चेहरा 'उसकी उरिया बाहे'''और उसका सारा शरीर जैसे हजारो टरपेण्टाइनके पीपे जो तरतीबसे जमे हुए थे एकदम गिर पडे, जैसे दो विपरीत दिशाओसे आती ट्रेने वैक्यूम ब्रेक फेल हो जानेसे लड पडे, जैसे मेरी अपनी लाश ऊपरवाली बर्थसे नीचे गिर पडे ''लाश दुर्गन्ध फैलाने लगे, ट्रेनके डब्बे उलट जाये और टरपेण्टाइनके पीपे बह निकले—गन्दा और घिनौना तैल पेशाब-जैसी लकीरे बरसाती केचुओके जिस्म-जैसा इन्द्रधनुष काले डम्मरकी शक्लका बादल ' रिसते हुए पीब-जैसा दूध बिखरी हुई चायका कीचड'' पसते हुए कोढके गन्दे संगमरमर-जैसे दाग मरहम लगी जाँघोका घिनौनापन घोचे, घुम्मट' कभी साफ नही किये जानेवाले सार्वजनिक पेशाबघर-जैसा वातावरण ·

मै उतनी तेजीसे कभी नही भागा हूँ जीवनमे '''न मुझे रेशम-मखमल याद है न फ्रेम जडे कमरेका उजेला। मै सोचता था अँधेरा मेरे खयालोको छेडता है। मै सोचता था अँधेरा मेरी आँखोको धोखेमे रखता है। मै सोचता था अँधेरा मेरे मुँहका कौर छीनता है'''

मै भागे जा रहा था और मेरे पीछे वह लाखका रंगीन घर धू-धूकर सुलग रहा था '''

अँधेरा ही अँधेरा। जहाँतक पैर चले, अँधेरा। जहाँतक दृष्टि जाये, अँधेरा। और उस अँधेरेमे तेज आँधी थी, आँधी साथ ओले भी ले आयी थी। जैसे कोई चुन-चुनकर, मुट्ठी भर-भरकर मुझपर ओले फेंक

रहा था, हर ओला एक आँख था। मै चल रहा था श्रीनगर जानेवाले रास्तेपर और मुझपर आँखोकी बरसात हो रही थी—सगमरमरकी मूर्तिके टुकडे मुझपर बरस रहे थे, जाँघोपर रिसते हुए कुष्ठके सफेद दाग मुझपर बरस रहे थे···मै उस रात नही रुका, कही नही रुका, उतारमे लुढक गये पहियेकी तरह निर्बाध चलता ही रहा। कुछ देर बाद मैने ठीकसे साँसे ली, एक मिनिटको रुका, शरीरपर अटके हुए ओलोको झाडा···आगे-पीछे हर तरफ फिर वही परदा, वही अँधेरा परदा लटक आया था—जिसमे अपना चेहरा छिप जाता है और सामनेवालेका चेहरा गायब हो जाता है।···

वही अँधेरा और चालीसगाँव।

वही अँधेरा और मनमाड।

वही अँधेरा और इगतपुरी।

अब हर आवाज मेरी धडकनको बढाये जा रही है। अब हर आवाज मेरे सामने समस्या है कि अँधेरेमे बैठा रहूँ या उजेलेमे चला जाऊँ। ऐसी उत्तेजना आ गयी है शरीरमे कि लेटे रहनेमे भी कष्ट हो रहा है। नस-नस जैसे अन्दरसे तडक रही है।

कोई एक बिस्तर बाँध रहा है। पूछ रहा है—"अब अगला स्टेशन कल्याण है न?"

कल्याण यानी रामवाडी यानी भैसे यानी मेरा घर यानी मेरी पत्नी····

अन्दर ही अन्दर मै कुछ गिन रहा हूँ, जाने किस अकपर पहुँचते ही ट्रेन रुक जाये।

एक्क,

दो,

तीन,

चार,

पाँच

पाँ ा च,

पाँ ा ा च,

पाँ ा ा ा चच······

मेरे हाथ काँप रहे थे। मेरे पाँव काँप रहे थे। मेरा सारा शरीर काँप रहा था। मेरे हाथकी पेन्सिल उँगलियोसे छूटकर नीचे गिरे टरपेण्टाइनके धब्बेपर फिसल रही थी। उजेला मेरे शरीरपर, मेरे कम्पनपर, सारे पठानकोटपर फैला हुआ था। यह वही रातवाला उजेला है और इसमे मेरी आँखे वही सब देख रही है गन्दा और घिनोना तेल पेशाब-जैसी लकीरे··· बरसाती केंचुओके जिस्म-जैसा इन्द्रधनुष··· काले डम्मर-की शक्लका बादल ···रिसते हुए पीब-जैसा दूध ···बिखरी हुई चायका कीचड···और ·और ···

छह,

सात,

आठ,

आ ा ठ,

आ ा ा ठ,

आ ा ा ा ठ,' ····

बस, मुझे यहीतक गिनती याद है। गिनती भी और उजेला भी और चेहरा भी।

लेकिन अब सारा अँधेरा कट गया है। खिड़कीके शीशेमे-से हलका उजेला छन-छनकर सब सोये हुए चेहरोको धो रहा है। फिर कोई पुल है, शायद कोई दस-बारह स्लीपरवाला पुल ही हो। इगतपुरीसे ट्रेनका एंजिन बदल गया और चलती हुई आवाज़ भी बदल गयी है। अब आवाज़ ऐसी है जैसे छक्-छक्के गलेसे कफ गिर गया हो।

पुल गुजर गया है और मै ऊपरवाली बर्थसे नीचे उतर आया हूँ, नीचे – जहाँ दरवाजा है और जहाँसे मै और नीचे उतर सकता हूँ, नीचे – जहाँ प्लैटफॉर्म है और जहाँसे मै बाहर जा सकता हूँ, बाहर·····

ट्रेन-जैसे आखिरी ताकतको आजमाती दौड रही है – सकासक्, सकासक् ।

ट्रेन रुकी है तो मेरा शरीर झटका खा गया है – रीढकी हड्डीमे एक चमक उठ आयी है, एक बीत जानेके फीलिंगसे सर उठाकर ऊपर देखता हूँ । बेसिनके ऊपरवाले आईनेमे मेरे सफेद बाल और सफेद दिखने लगे है । एक बचपन है मेरे पास, जिसे याद करता हूँ तो उम्रसे अधिक जवानी अनुभव होती है जिसकी याद-भरसे बाल सफेद हो जाते है·····

मै एक-एक कदम आगे बढ रहा हूँ । लग ऐसा रहा है जैसे कोई फिल्म देखकर आ रहा होऊँ और कभी उस देखी हुई फिल्मके बारे सोचता हूँ, कभी उस सडकके बारे जिसपर मै चल रहा हूँ । इतने सवेरे एक भी दुकान नही खुली है, केवल धूल उड रही है । धूल उड रही है और सडकपर पडे गोबरकी दुर्गन्ध फैल रही है । सवेरे-सवेरे सामनेकी खाडीमे-से बडी बदबू उठती है, जैसे बहुत सारे बगुलोने बीट की हो और उसपर किसीने पानी छींट दिया हो । पीछे, दूर एक चलती ट्रेनकी रोती हुई आवाज रेंग रही है और मै जबरन इस बातको दोहराता जा रहा हूँ कि मै अपने घर लौट आया हूँ । मेरे इस एक वाक्यपर कई-कई प्रश्नचिह्न लग जाते है और ऐसा भास होता है जैसे ट्रेन जल्दी आ गयी है । दो दिन और दो रात जरा-सी देरमे बीत गये है । अभी उस सवेरे मै पठानकोटमे ऊपरवाली बर्थपर चढा था और अभी उस बर्थसे नीचे उतरा हूँ—नीचे कल्याण है और ऊपर पठानकोट था । सामने है रामवाडी । दाहिनी ओर पेट्रोल पम्पका गोल चक्का अबतक चल रहा है । उस गोल चक्केके सामने

ही वाडीकी फटकी है और फटकीसे आगे ई ब्लॉक, नम्बर सोलह। पता नही मेरे सहसा भाग जानेसे मेरी पत्नी रोयी या नही ? मैने जाते समय घर पहुँच जाये ऐसी खबर भेज दी थी कि मै भागकर जा रहा हूँ और मुझे ढूँढनेकी कोशिश न की जाये। मेरे घरमे कुहराम मच गया होगा। पत्नीने सिर पीट लिया होगा। वह अपने ही उन वाक्योको याद कर रही होगी जो मुझे नश्तर लगानेके लिए वह जान-बूझकर बोला करती थी। रोते-रोते वह कहती रही होगी—"अब मै कभी नही लगाऊँगी सरसोका तेल। इस सरसोके तेलने मुझे उनसे छीन लिया।''' मै इन भैसोको जलगाँव वापिस लौटा दूँगी। उन्हे न भैस पसन्द, न भैसका दूध, न भैसका शेण' ''तो फिर मै ही क्यो पसन्द करूँ इन सब चीजोको''''। हाय, मै भी किस पगले भाऊ-के कहनेमे आयी और उनके पीछे उस कुरलेवालीकी बातको लेकर झग-डती रही।''''पत्नीको अपने हिस्सेका प्यार मिल जाये कि हो गया, उसे क्या फिर कि पति किसीके साथ घूमे या किसीके घर जाकर खाना खाये। ओ मेरे साँई बाबा, एक बार उन्हे घर बुला दो, फिर मै हाथ बाँधकर उनके पैरो पड जाऊँगी '''।" गुर्राता हुआ एक ट्रक मेरे पाससे गुज़र गया है तो मेरी पत्नीका विलाप एकदम बन्द हो गया है।

"लेकिन इस सब रोने-धोनेसे तुम खुश हो जाओगे क्या?"

"नही। मै उस घरसे कभी ख़ुश नही हो सकता।"

"तो वहाँ जा क्यो रहे हो ? रामवाडी जाकर करोगे क्या ? क्या तुम्हे भी भैस दुहना सीखना है या नाप-नापकर पाव-पाव-भर दूध बेचना है ?"

मै उलटे पाँवो लौट पडा हूँ—मै उस घरमे जाकर क्यो गोबरमे पैर भरूँ ?

कोई ट्रेन फिर आयी है। आकर रुकी है। रुकनेपर शोर उभरा है। ट्रेन फिर चल दी है। शोर सो गया है। वही मेरी अपनी आवाज़ चली

जा रही है जैसे किसी परिचितको किसी कारमे गुज़रते देखकर हम लौट-कर कैसे सोचने लग जाते है—वैसे ही खडा होकर मै सोचता रह गया हूँ।

वह सब जो बीत गया कितना खूबसूरत था। ···लोकलमे रमीका पहला डील। सीक्वेन्स तैयार और हाथमे दो-दो क्वीन्स। "प्लीज हेल्प मी।" "एक सगमरमरका पुणे टाइप गालकी हड्डियोवाला शरीर। दोनो एगेज्ड हाथ। साफ मँजा हुआ गोल पीतलके हैण्डिलवाला डब्बा। तीन भाकर, एक फोड अचार, और नमक। कुरलासे वी टी, वी टीसे कुरला। गेट-वे ऑफ इण्डियाके सीग-चने। एलिफेण्टाको जाते मोटर-लाचकी भड-भड। मलाबारके उलटे-सीधे रास्ते। हैगिग गार्डनके पिछले हिस्सेसे दिखता समुद्र। चौपाटी-पर सूखते हुए जाल और फैली हुई रेत। डीलक्सके कूपे-जैसा पुणे। ताजी वेणी। ···फिर एक ट्रकवालेने हॉर्न बजाकर चौका दिया है। वह सब जो बीता हुआ है न वह समुद्रकी तरह दूर तक चला गया है, आकाशकी तरह हर तरफ फैला हुआ है। जब असलमे यह सब हो रहा था तब क्षण दो क्षण, घण्टे दो घण्टे ही इसे देख पाया था। एक मिनिटमे उसने मोमबत्तीके पीले उजेलेमे साडी बदल ली थी लेकिन उसका वह एक मिनिटका शरीर अब महीनोसे मेरी आँखो सामने है। लेकिन अब उस बीते हुएसे क्या? सामनेसे भैसे चली आ रही है। पता नही ये आ रही है या जा रही है, एक दूसरेके शरीरको घिसती हुई, जमीनपर मुँह मारती हुई, ऐसी डोलती-डालती अनिश्चित मुद्रासे चलती है जैसे कही जा ही नही रही है या जैसे कही भी जा सकती है—ठीक मेरी तरह। मेरी भी यही हालत है।··

और ये भैस पागुर कर रही है। पहले जल्दी-जल्दी हफस-हफसभर लिया पेटमे और अब उसी खाये हुएको निकाल-निकालकर चगल रही है···ठीक मेरी ही तरह। मै भी उस तबके वर्तमानको अब जुगाल रहा हूँ—चबाये जा रहा हूँ उसे, जितना चबाता हूँ, उतना ही वह पिसकर

बारीक होता जा रहा है ' और मै ही क्या, किसीको भी गौरसे देखो, सब ही बीते हुएकी जुगाली कर रहे है—खाते समय तो मशीनकी तरह जैसे-तैसे खा लेते है, फिर सपने या नीदमे या ऐसे अनिश्चित मुद्रामे इन भैसो-की तरह चलते हुए '

"तुम ! तुम लौट आये ?" सामने मेरे ससुर है। ऊपर तक धोतर बाँधे बनियान पहने एक सण्टीसे, भैसोको मारते, धकियाते लिये आ रहे है।

"कब लौटकर आये ? अभी सवेरेको ट्रेनसे आये क्या ?" वे खुश हो गये है मुझे देखकर। भैसोको सण्टी मारते मारते आगे धकाते जा रहे है और पूछ भी रहे है—"इस तरह कोई भागकर जाता है क्या ? अरे भाई, मै तो यह सब तुम्हारे लिए ही कर रहा हूँ। मै तो बूढा आदमी हूँ। आज हूँ कल मर जाऊँगा ! चलो चलो ' !" भैसोके साथ उन्होने मुझे भी आगेको धक्का दिया है। जैसे बगैर कुछ सोचे-समझे भैसे आगे बढ गयी है वैसे ही मै भी बढ गया हूँ।

"तुम गये तबसे सारा घर क्या सारी रामवाडी सूनी हो गयी है। एक तुम तो थे जिसके आनेकी हम लोग देर रात तक राह देखते रहते थे। अब तुम ही चले गये तो इन भैसोसे सिर फोडते रहते है।" वे उसी तरह भैसोको हँकालते-हँकालते आगे बढ रहे है।

पेट्रोल पम्पकी लाइट फक्कसे गुल हो गयी है। वह घूमता हुआ रोशनी-का गोल चक्का कही खो गया है। खडसे फटकी खोल दी गयी है। भैसे उस फटकीसे खुदको रगडती हुई अन्दर जा रही है। आगे मेरे ससुर है और उनके पीछे मै। भैसोके पिछले दो पैर ठीक वही गिर रहे है जहाँ अगले दो पैरोके निशान बने है और केवल यह देखकर मै अपने ससुरके पैरोसे बच-बचकर आगे बढ रहा हूँ।

सारी रामवाडीमे खबर फैल गयी है कि मै लौट आया हूँ। एक-एक

कर सब मिलने आ रहे है। कह रहे है मै दुबला हो गया हूँ, कह रहे है मै बडा उदास लगने लगा हूँ।

भाऊ उसी तरह हँस रहा है—"आज सत्रह गाडियाँ इकट्ठी आ गयी है, पूरा शेड भर गया है। सारी सीमेण्ट ही सीमेण्ट है। सिरपर तौलिया बाँधूँगा तब इण्ट्री ले सकूँगा। वह फिर हँस दिया है। कैसा गुस्सा चढा था उस दिन मुझपर कि भाऊको चलती गाडीसे मैंने नीचे उतार दिया। यह तो वह बच गया, केवल क्रैक होकर रह गया, नही तो मर भी गया होता।" '

भैसके लिए मेरी पत्नी कुट्टी काट रही है। खली तसलेमे भर रही है। मै बैठा हूँ खाटपर और भैसोको देख रहा हूँ" 'आधे कमरेमे कण्डे भरे हुए है। बरामदेमे पडियाएँ बँधी है। मै खिडकीसे बाहर देख रहा हूँ कि एक भैस गोबर कर रही है। एक गन्दी पट-पट होती है और हरा-हरा गोबर एक घिनौनी आकृति बनाता फैल जाता है। फिर दूध निकाला गया है—दूध लेनेवालोकी भीड आ गयी है। मै देख रहा हूँ कि सेरो दूधमे-से पाव-भर दूध बचा है और मेरी पत्नी मेरे लिए चाय बना रही है। मेरे ससुर चाय नही पीते। वे इस समय पानी भर रहे है।

प्याला मेरे सामने रखा है। उसमे काली-काली पत्तियाँ तैर रही है और तेज रगकी चाय उस बगैर नाकवाले प्यालेसे पीनेको मन नही हो रहा है।

"क्यो, अभी भी उसीकी याद आ रही है?" यह पहला वाक्य है जो मेरी पत्नी मेरे लौटनेपर बोली है। मै सिर उठाकर उसकी तरफ देख-भर लेता हूँ। वही सरसोके तेलकी बदबू मेरी नाकमे एक तीखी लकीर खीच रही है।

"चाय भी नही पी रहे हैं? क्यो, क्या बात है?" उसके इतना कहनेपर मै प्याला उठाकर एक घूँट भर लेता हूँ।

"कहाँ रहे इतने दिनो?"

"पठानकोट।"
"ये कहाँ है ?"
"उत्तरमे।"
"बहुत दूर है ?"
"हाँ।"
"वहाँ किसी कामसे गये थे ?"
"नही।"
"फिर ?"
"यहाँसे मन ऊब गया था'…।"
"मुझसे ?"
"नही।"
"फिर।"
"किसीसे भी नही।"

एक चुप खाली प्यालेपर आ बैठी है। एक पूरा कोरा पृष्ठ इस चुप पर-से गुज़र गया है। कैसे सवाल हैं ये ? कैसा घर है ये ? कैसी चाय है ये ? यदि मेरा वश चलता तो मै उसी क्षण उठकर चल देता। केवल यह सोचकर रह गया कि कौन फिज़ूलमें और नाटक पैदा करे…

अब मेरे ससुर आ गये है—भैंसोका काम निबटाकर। कह रहे है—"इन भैंसोसे दो सौ रुपया मिल जाता है। एक नौकरका पचासेक रुपया लगता तो मै हूँ ही, वह भी बच जायेगा। अब तुम पगारमे-से भी कुछ बचाओ तो रामवाडीके पीछेवाली जगह जो है ना उसे खरीद लेते है। अपना मकान भी हो जायेगा और तबतक तीनेक बरसमे ये समझो कि चारकी आठ भैंसें हो हो जायेंगी। फिर तुम चाहो तो नौकरी भी छोड देना ।"

मैंने सिर उठाकर देखा है ' रामवाडीके पीछेवाली जगहपर मेरो

दृष्टि गयी है—वहाँ तो इतना गन्दा है कि पाखाना भी नही बनवाया जा सकता, वही ये मेरा मकान बनवा रहे है, वहाँ ये चारकी आठ भैसे करवा रहे है, वहाँ ये मेरी नौकरी छुडवा रहे हैं ··

—"भैसोकी जायदाद सबसे ज्यादा फायदेकी रहती है। अगर साल सँभाल ठोकसे की न, तो तुम्हारे बच्चोको स्कूल जानेकी भी ज़रूरत नही—और स्कूल-कॉलेज जाकर बच्चे बाबू ही तो बनते है····!"

शायद वे अब भी बोल रहे हैं। मेरा भविष्य बना ही चुके। अब मेरे बच्चोका भविष्य बना रहे है मेरा बच्चा और भैसे·· खूँटेसे बँधी भैसे, हर साल बच्चे देती भैसे, अगले पैरोपर पिछले पैर रखनेवाली भैसे, गोबर करती भैसे· । मेरा बच्चा सण्टी लेकर उनके पीछे पड़ा दिन-रात हट-हट-हट किया करगा, दिन-रात गोबरपर-से उठ-उठकर मच्छरोका छत्ता उसके चेहरेपर बैठा करेगा। एक जोरका 'नही' मेरे अन्दरसे उठ रहा है। अण्णाने मुझे रेल बना दिया, ये मुझे भैस बनानेपर तुले हुए है··· और सच ही अब मेरा चेहरा किसी भी भैसके चेहरेकी तरह हो गया है—मै कही भी नही देख रहा हूँ· · एक आवाज़ सुनाई देती है—कही दूर, बहुत दूर ट्रेन सीटी दे रही है—शायद वह सीटी मुझतक पहुँचती है इसीलिए मै बाहर देख रहा हूँ। कैसे पहिये लुढकन लेते हैं—कैसे ज़ोरकी आवाज़ होती है, कैसे सारे डब्बे और सारे पहिये चलने लगते हैं फिर···· · ·

"तबीयत ठीक नही है क्या ?"

"कहाँ ?"

"कहाँ क्या ? आपकी तबीयत ठीक नही है क्या ? और खाना अभी खायेंगे या देरसे ? मै तो रोज़ शामको ही खाना बनाती हूँ—अभी तो रखा है, आपके लिए ताज़ा बना दूँ ?"

"नही।"

"क्यो ?"

"ऐसे ही····!"

"तो क्या उसने दिल तोड दिया ?"

"क्या ?"

"वही आपकी ? उसे क्यो नही वो वहाँ ले गये । ले जाते । रुपये नही थे तो मुझसे ले जाते · सौसे ज्यादा लेती क्या ? · "

वह खाटपर मेरे पास झुक रही है और मै एकदम उठ बैठा हूँ। कह रहा हूँ—"यहाँ मच्छर बहुत है !"

वह कोई जवाब नही दे रही है। पसरकर सो गयी है। उसके सरसोके तेलमे सने बाल मेरे तकियेपर फैले हुए है । उसका बाप बाहरके कमरेमे सोया है और उसने वहाँकी खाट उठाकर यहाँ लगा ली है जहाँ सीलन है, मोरी है, कण्डे है और उजालदानका नाम भी नही है।····

मै खाटकी ईसपर बैठा हूँ। मुझे यह भान है कि यह ट्रेन नही है, यह घर है, मेरा घर है ·! लेकिन यह मेरा घर कैसे हुआ ? ये भैसें, ये कण्डे, वह इसका बाप, यह इसका पसरकर सोना, ये मच्छर—इनमे मेरा जरा-सा भी कुछ अपना नही। अपनी होती है ट्रेनकी ऊपरवाली बर्थ, अपनी होती है तो यात्रा ··कौन-सी ट्रेन होगी वह ? कौन-सी ट्रेन आती है इस समय ? अभी सिगनलसे भी दूर है। वहाँ उस बिन्दुसे वह आवाज चली आ रही है। मुझे सब याद है : मुझे सवेरे चार चम्मच दूधमे डालकर बासी रोटियाँ खिलायी गयी—रोटियाँ जो भाकरसे भी गयी बीती थी ···। दाँत साफ करनेके लिए मुझे घासका एक तिनका दिया गया, जिसपर भैसका गोबर लगा था। दुपहरमे साँई बाबाकी पूजा की गयी। प्रसाद बाँटा गया। कीर्तन हुआ। मेरे मनमे केवल एक ही बात आयी है कि साँई बाबाकी तरह ही सिरपर रूमाल बाँध लूँ और एक कुत्ता पाल लूँ · ! जैसे उनकी तसवीरमे उनके पीछे घोड़ा खडा है, वैसे ही मेरे पीछे ट्रेनका एजिन खडा होगा। मै भी एक पत्थरपर पैर रखे दूसरा पैर ऊपर उठाकर उसी उनके पोज़मे बैठ जाऊँगा,

फिर लोग मेरे जन्मस्थानपर आयेगे, मेरा जन्मस्थान तीर्थ बन जायेगा'''
लेकिन कौन-सी जगह तीर्थ बनेगी ?—शिरसोली ? महसावड़ ?—माहेजी ?—परघाडे ?—पाचोरा ? पता नही इनमे शिरडी[८१] किस जगहका नाम है '' ''' ·

"अच्छा किया जो तुम लौट आये ?"

"लौट आये ?"

"हाँ, तुम लौट आये न''''?"

"नही, मै लौटकर नही आया हूँ।"

"फिर ?"

"मै भागकर आया हूँ।"

"भागकर ?" उसके हाथसे दूधका बरतन छूट गिरा है—"क्या किया ऐसा ? किसीका खून कर दिया ? या रुपये नही थे तो जेब काट ली ?"

मैने अपना चेहरा कुबडे प्रश्नवाचक चिह्नकी तरह उठा लिया है। वह पूछे जा रही है—"क्या किया ऐसा ? क्या किया ऐसा जो भाग आये ?"

"यहाँ क्या हुआ था जो भाग गया था ?"

"तुम्हे सीधे बैठकर खाना नही आता। मेरा प्यार पसन्द नही था तुम्हें।" वह बोले जा रही है। प्यार ?—हुँ, मै कोई भैस हूँ ! प्यार कोई गोबर और मच्छरसे किया जाता है ? मेरे अन्दर जो 'नही' बन रहा था वह उभरकर ऊपर आ गया है। नही''''''''नही। मेरे सामने एक बार फिर टरपेण्टाइन बिखर गया है—गन्दा और घिनौना तेल''' पेशाब-जैसी लकीरें''''''''बरसाती केंचुओके जिस्म-जैसा इन्द्रधनुष''''

"कुछ बोले थे क्या ?"

"नही।"

एक झटकेके साथ ट्रेन चल दी है। मै दरवाज़ेके पास खडा बाहर देख रहा हूँ—बाहर कितना खुला-खुला है—दूर तक मैदान, खुश दिखते पेड-पौधे, बहती हुई नदी, उडता हुआ नीला रंग और अन्दर कैसी भीड है, कैसी घुटन है, कैसा शोर है, कैसे कन्धे छिल रहे है।

केवल पैसठ मिनिट। कल्याणसे वी टी पैसठ मिनिटकी दूरीपर है ट्रेन-द्वारा। मै इस दूरीपर चल रहा हूँ। इस समय गतिपर बैठा हुआ आदमी हूँ मै और घडीकी सुईपर मेरी उम्र भी गुजर रही है। दोनो दौडती गतियोके बीचमे हूँ। शायद राह गुजरनेवालोको मै खुद भी भागता हुआ नजर आ रहा होऊँ।

कोई सहसा मुझसे पूछ ले कि इस समय तुम कहाँ हो तो मै घबरा जाऊँ। घबराना स्वाभाविक है—यूँ कि कुछ तो मै अतीतपर हूँ, कुछ वर्तमानपर, कुछ भविष्यमे और साथ ही इस युगकी दौडती हुई मशीन-पर भी। कोई मुझसे दुबारा पूछे कि तुम कहाँ हो तो मै कहूँगा : दस साल पीछे अतीतमे जाओ, अभी इस समयके इस क्षणपर चलो, फिर पच्चीस साल आगे, भविष्यमे उडो और इन तीन आयामोमें गतिपर गुजरती मेरी उम्रकी लम्बाईको जोड दो··· इस समीकरणको यदि कोई हल कर ले तो वह यह बतला सकता है कि मै कहाँ हूँ।

"मै फिजूल ही हँस दिया हूँ। हँस इसलिए दिया हूँ कि मै हर बार अतीतके हवाई अड्डेपर जा उतरता हूँ। स्साला, प्रकाश तो फक्त तीन लाख किलोमीटर ही जाता है एक सैकण्डमे, लेकिन मेरे विचार उससे तेज़ चलते है—इसीसे जब भी उसके पंखोपर बैठता हूँ अतीतमे ही जा उतरता हूँ! आज मुझे टाईवाले सर खूब याद आ रहे है। कैसे प्यारे लगते थे, पूरे आइन्स्टाइन—वैसे ही बाल उनके थे और वैसे ही वे भी गणितका जोड-तोड किया करते थे पागलोकी तरह। हम लोग बडे नालायक थे कि उन्हे 'फोर्थ डायमेन्शन' कहकर चिढाया करते थे। मेरी भी क्या हालत हुई है खराब इन डायमेन्शनोके मारे! इसकी लम्बाई-चौडाई-ऊँचाई

और टाइमने मेरे घरमे चार भैसोके रूपमे अवतार ले लिया है……

ट्रेन चल रही है और किसी भी एक पहियेकी तरह मेरा सिर भी घूम रहा है—खूब तेज-तेज और यही आवाज दुहरायी जा रही है, यही, यही आवाज—पहियोके लुढकनेकी आवाज।

कोई पूछ रहा है—"हो आये अपने घर?" और वह प्रश्न पूछकर हँस रहा है—"घर जानेके बजाय अनलोडिंग करवाओ गाडीका। सेठने कह दिया है कि भले ही रातके बारह बज जाये लेकिन इण्ट्री पूरी करके घर जाओ।" वह फिर हँस रहा है, हँसे जा रहा है।

इस भाऊकी हँसीको कौन रोकेगा? इसकी हँसी किसीसे नही रुक सकती, किसीसे··

कुरला! कुरला है ये! कु–र–ला! कुर-ला!! कु-रला!!! मै उतर क्यो नही जाता? अब मुझे कल्याण लौटकर तो जाना ही नही है. मुझे वह नक्शा बिलकुल पसन्द नही। मै उसी तरह रहूँगा जिस तरह पहले रहता था—दिन-रात ट्रेनमे, ट्रेन ही ट्रेनमे। मेरा अपना कही कोई नही है। मै अकेला हूँ और अकेला ही रहूँगा, मुझे किसीसे कोई सरोकार नही, किसीसे कुछ लेना-देना नही। मै भला, मेरी ट्रेन भली। मै चलता रहूँगा और मेरी ट्रेन भी चलती रहेगी इसी तरह।

सारा दिन बीत गया है वी टी पर चक्कर काटते-काटते। दो दिन और फुरसत है। फिर ड्यूटी शुरू हो जायेगी। नही होगा तो मै सेण्ट्रल-से नॉर्दर्न रेलवे या उससे भी आगे एन० ई० मे ट्रान्सफ़र करवा लूँगा। इस मुम्बईकी मशीनमे ही मै क्यो पिसता रहूँ? यहाँ रहनेसे लाभ भी क्या? जो बीतना था वह तो बीत गया···कुरलामे कैसे गाडी रुकी थी उस सुबह! कैसा डोल चल रहा था उस डब्बेमे। कैसी घिघियाती आवाज़मे प्लीज-प्लीज कर रही थी वह। कैसे गेटवेपर उसने मेरे

कन्धेपर संगमरमर रख दिया था। कैसा था मोमबत्तीके उस पीले उजेलेमे उसका वह पल-भरको दिखकर छिप जानेवाला शरीर। वह एलिफेण्टा। वह मोटर-लाचकी भड-भड। वह चालीस-चालीस पैसेके दो टिकिट। वह उन टिकिटोको देकर ली गयी दो प्याला कॉफी। वह तेज मिर्चीवाली ऊसल। खूब दूधवाली वह पौन-पौन कप चहा। एक लाल बॉर्डरवाली साडी। एक लाल ब्लाउज। एक डब्बा खाना। चार चूड़ियाँ। दो क्लिपे। एक तसवीर बनती है और उसके ऊपर एक साँचीका स्तूप कहीसे आ गिरता है···। कोई मुझे तभी जोरसे सण्टी मारकर हट-हट करता डाँटने लगता है—"भैंस कहीके! जरा समय मिला नही कि अपने खाये हुए को निकालकर जुगालने लगता है ।

लोकलमे बैठे-बैठे मै कल्याण तक जाना चाहता था या यूँ ही वक्त काटनेके लिए ट्रेनमे बैठ गया था यह मुझे कुछ नही मालूम। जब उसने मेरे कन्धेपर हाथ मारा और हल्लो कहा तो जैसे मेरी नाद टूटी।

"कहाँ हो आजकल ?"

"रेलवेमे ही, और तुम ?"

"ऐसे ही यार, टाइम पास करनेके लिए एक नौकरी अटका ली है।"

"और ?"

"ठीक है। अच्छा···"वह दादर उतर गया है। आज नीले रगका स्पोर्ट-शर्ट पहने है। बहुत दिनो बाद मिला है। थोडा मोटा भी हो गया है। यह ट्रेनिगमे भी कहा करता था कि यह सब उल्लूपन है और पहले उल्लूपनको ही झटककर अलग नही किया तो कुछ समयमे उल्लूपनका गाड़ी-भर लोड कन्धेपर आ जायेगा···।

ट्रेनिगवाले दिन और स्पोर्ट-शर्टकी मस्ती मेरी आँखो सामने है। जा रहा है यह ट्रेनिग छोड़कर और कंघेसे बाल ठीक रहा है—"मार गोली इस ट्रेनिंगको यार! अपना तो ये है कि जो नापसन्द है उसे झटककर अलग कर दिया और जो पसन्द है उसे दूसरेके मुँहसे भी छीन लिया···"

डम—डम—डम,
डम—डम—डम,
डम—डम—डिगा,
डम—डम—डिगा ·· ··

या तो यहाँ डम—डम—डिगावाला गीत बज रहा है या प्लैटफॉर्मपर खड़ा कोई कघेसे बाल ठीक कर रहा है, या पूरा आकाश नीले रगका स्पोर्ट-शर्ट पहने खडा है—पता नही क्या बात है कि मै गाडी खडी होते ही उतर गया हूँ।

कुरला।

क्या हुआ कि मै वैसा शर्ट नही पहने हूँ और ट्रेनिगसे भागा हुआ नही हूँ और क्या हुआ कि मै कन्धे और सिरपर उल्लूपन ही नही भैसपन भी लादे हुए हूँ – आज मै अपनी नापसन्दको झटककर अलग किये दे रहा हूँ। झटकी हुई धूलके साथ रामवाडीका सोलह नम्बर, चार भैसे, गाड़ी-भर कण्डे, अनगिन मच्छर, सोलह हाथकी साडी, सरसोके तेलकी बदबू और मोतियोवाली गोल नथ नीचे गिर गयी है।

सूरज डूब चुका है और शामकी धुएं-भरी गन्दी धुन्ध फैल रही है। मै मजबूत कदमोसे उसकी खोलीके सामने खड़ा हूँ – आज मै सब चीज़ोको ठीक कर देना चाहता हूँ। आजके बाद कोई चीज बेतरतीब नही होगी – यह नही होगा कि मन यहाँ पड़ा है और सपना वहाँ बिखर रहा है। यह क्या कि आदमी-जैसा आदमी होकर मै लोहेके रास्तोपर चलता रहूँ? जो बीता हुआ था वह मेरे सामने है। आजके मेरे मजबूत कदम भी मेरे पास है। इन दोनोको मै टकरा रहा हूँ – देखूँ कौन बचता है इन दोनोमें-से?

मैने हाथ आगे बढाया है। अब सीधे हाथकी अँगूठेके पासवाली

उँगलीको मोड़ा है और दरवाजेपर उसे बजाया है –

ठक – ठक – ठक्,

ठक – ठक – ठक्····

"कौन है ?" एक आवाज आयी है। एक क्षणको बदले हुए दिलका पिस्टन गियर चल पडता है – शटाक् शट-शट्, शटाक-शट् शट् और दिमागवाला बैलेन्स-व्हील घूमने लगता है –

टिक् – टिक् – टिक्,

टिक् – टिक् – टिक्··

"आप ?" खुले दरवाजेसे आवाज आयी है।

"हाँ। मैं।" मैं मजबूत कदमोपर खडा हूँ।

कमरा बदल गया है। मेजपोशपर बैठे हुए खरगोशकी जगह दो चिडिये आ गयी है जो एक डालीपर बैठी है और एक-दूसरीको चोच मार रही है। पलगपर चादरकी जगह कालीन है।

"अच्छा हुआ कि आप लौट आये।"

"मै लौट तो सकता ही नही। मुझे लौटनेका तरीका ही नही मालूम। मै तो भाग आया हूँ।"

"भाग आये है ?"

"कल्याणसे पठानकोट भागकर गया था, वहाँसे भागकर फिर कल्याण गया और अब कल्याणसे भागकर कुरला आया हूँ ?"

"कही नही। अब मै कही भागकर नही जाना चाहता। भागते-भागते थक गया हूँ। आँधी और ओले और धूल और कोयलेसे मै परेशान हो गया हूँ·।" मै चाह रहा हूँ कि मै बोलता ही चला जाऊँ। मुझे बोलते हुए कोई रोके नही, कोई अगर सुनना न चाहे मेरी बात तो हट जाये मेरे सामनेसे लेकिन रोके नही कोई मुझे।

उसने स्टोव जला लिया है। वह मेरे लिए चहा बना रही है – वही

सगमरमरका शरीर, वे ही अन्धी आँखे, वही अर्धनग्न पहनावा, वे ही कटे हुए हाथ ....

वह स्टोवकी आवाज सारी खोलीमे भरी हुई है। मै चुप हूँ शायद लेकिन आज भी उसी तरह, लाचवाली पिकनिककी तरह, बोले जा रहा हूँ – "सुनो। अब मैने अपनी नापसन्दको झटककर अलग कर दिया है। अब मेरा उन बीते हुए दिनोसे कोई सम्बन्ध नही। अब तुम मुझसे दूर नही रह सकती। मेरी सारी पगार तुम पुणे भेज दिया करना। हम दोनो सूखी भाकर खाकर पानी पी लिया करेगे अब मै सब चीज़ोको बदल दूँगा !" एकदम शुँय्य करके स्टोव गुल हो गया है।

चायके प्याले हम दोनोके सामने रखे है।

"तुम्हें मुझपर गुस्सा तो आया होगा ?"

"उससे क्या होता है।"

"पहले तुम यह बताओ कि गुस्सा आया या नही ?"

"गुस्सा ?" वह एक घूँट चाय पीते हँस दी है—"मुझे यह नही मालूम था कि ग़ुस्सेसे ताकत आती है। और सच पूछे तो जिस दिन मेरे इन्तजारको यह मालूम हुआ कि तुम भुसावलसे शादी करके लौटे हो. उस दिन तुम्हे सबक सिखानेकी इच्छा हुई थी। जी चाहा था कि घरसे बाहर निकलनेपर जो पहला आदमी मिले उसीसे शादी कर लूँ और फिर अपने पतिसे कहूँ कि ''!"

"रुक क्यो गयी ?" मैने जोर देकर पूछा है।

"मैने कहा न कि गुस्सेसे कुछ नही होता। हाँ, ताकत जरूर आती है।"

"तो तुममे अब ताकत आ गयी है ?"

"हाँ।" वह फिर हँस दी है।

मुझे लगा है कि प्लैटफॉर्मपर घण्टेपर घण्टे बजाये जा रहे है। कई-

कई व्हिसल एक साथ फूँकी जा रही है। कई-कई सीटियाँ एक साथ गूँज रही है। कई-कई झण्डियाँ एक साथ हिल रही है। मैने चाय पीकर उसकी तरफ हाथ आगे बढाया है कि उसने दोनो प्याले उठाकर हाथ पीछे कर लिये है। एक क्षणमे सा - ा - ा - रा मुम्बई चकरीकी तरह मेरी आँखो सामने घूम गया है। मेरी आँखोमे स्टेशनसे दू-र अँधेरेमे चमकते सिगनलकी तरह कोई रोशनी चमकने लगी है।

"तो कल हम फैसला कर ले ?"

"फैसला ?" वह एकदम पीछे घूमी है।

"हाँ, फैसला।" मै उसकी आँखोमे सीधे देख रहा हूँ। उसके पीछे एक जालीकी अलमारी है, उसपर वही खरगोशवाला मेज़पोश बिछा है और इसके पास रखे फूलदानमे गुलाबके तीन फूल रखे है और उस फूलदानके पास''''उसका हाथ मेरी आँखोके सहारे फूलदानके पास गया है और उसने कोई चीज वहाँसे एकदम घबराकर हटा दी है ·

वही चकरीकी तरह घूमता सा - ा - ा रा मुम्बई उलटे-उलटे फिर गोल घूम गया है। मै कुछ बोलूँ कि वह बोल दी है—"ठीक है। कल शाम पाँचवाली ट्रेनसे आप आइए, मै यहाँ स्टेशनपर ही मिलूँगी, तभी फैसला कर लेगे।"

उसके इस वाक्यने एक वज़न मेरे सिरपर-से उतार दिया है और एक दूसरा वजन मेरे सिरपर रख दिया है। कोई मालगाड़ी पास हो रही है शायद। जोरकी भारी-भारी लुढकन मेरे रोम-रोममे-से गुजर रही है जैसे।

जैसे बीते हुए दिन और मेरे आजके मजबूत कदम टकरा गये है एकदम। मैं अपने बूटोसे चुन-चुनकर एक-एक दिनका सिर कुचलता जा रहा हूँ।'''

मुझे अब किसी भी गलत जगह नही रुकना है। कल शाम सब फैसला हो जायेगा 'कल शाम तक और मुझे चलना है, कल शाम तक और अपने

बूटोसे मुझे कुचलना है रास्तेमे पडे हुए दिनोको। कुरला छोडते जाने क्यूँ पहली बार मुझे यह लग रहा है कि टाईवाले सरके घर टेबलपर रखी मूर्ति और इस लडकीमे जमीन- आसमानका अन्तर है।

कोई पुल है क्या ?

खड - खड - खड,

खड - खड - खड,

खड - खड - खड, खड - खड - खड····

मै ऊपरवाली बर्थपर सोया हूँ। एक कोई बात कल ऐसी हो गयी है कि मुझे हर जगह पुलपर-से गुज़रनेका आभास हो रहा है। मैने जूते उतारकर पैताने रख लिये है और एक-एक स्टेशन मेरे सिरहानेसे गुजरता चला जा रहा है। वी टी से कुरला है ही कितनी दूर, लेकिन मै सो गया हूँ। आज फैसला हो जायेगा शामको। मै उन गोबर सहित भैसो और सरसोके तेलकी बदबूसहित पत्नीको लौटा दूँगा। मेरी आँखे मिची हुई है और मेरा शरीर एक गतिके साथ हिलता जा रहा है। मै तो मशीनका आदमी हूँ। टाईवाले सरने जैसी तसवीर बनानेको कहा था वैसा मै खुद बन गया हूँ। अब अण्णाका मतलब मेरे लिए अण्णा नही है। अब अण्णाका चश्मा नाकपर उतरते-उतरते नीचे गिर गया है, और गिरकर टूट भी गया है। अब तो अण्णा गीता समाप्त कर उससे भी आगे बढ गये है। अब तो रथके पहिये-ही-पहिये है दूर तक। अब तो हर सूरज मेरे बूटोसे कुचले हुए चेहरोके ऊपरसे गुज़रता है।

यह गया भायखला। भाय-खला, भाय-खला, भाय-खला······

यह गया परेल। परेलपरेलपरेलपरेलपरेल·······

यह गया दादर। दा-ा-दर, दाा-दर, दाा दर · ·

नीचे कोई किसीको डाँट रहा है।

"आँखे नही है साहब, अन्धा हूँ।"

"तो क्या अन्धोके लिए ये ट्रेन बनी है।"

एक अन्धा मुझे कुरुक्षेत्रमें मिला था न ? मिला होगा, मुझे क्या करना ?

मै बार-बार करवट ले रहा हूँ। हर करवटपर एक नये किस्मकी छक् - छक् मुझे सुनाई देती है। काँटे डायलपर ऐसे चलते दिखते है जैसे दो पैर हो और वक्त नापते दौडे चले जा रहे हो। वे टाईवाले सर भी हम बच्चोको क्या ऊल-जलूल बाते समझाया करते थे कि तीन तरफ स्पेस है और एक तरफ टाइम और वह टाइम आगे-पीछे दोनो तरफ चल सकता है। जाने क्या नाम है उस साँपका जिसके दोनो तरफ मुँह होते है। "लेकिन वह अब मै आँखोसे देख रहा हूँ। उस दौड़मे हर पैरको सहायता चाहिए। मेरे आजके पैर, मेरे बीते हुए कलके पैर—दोनो किसी-के पास चले जा रहे है दौडे हुए।

मै आँखे मीचे हुए सोया हूँ—एक अँधेरा घिरा हुआ है, जब भी आँखे खोलूँगा उजेला चमकने लगेगा मेरे सामने।

वही, हाँ वही आदमी मै भी हो गया हूँ आज। कह देता हूँ जगकर कि कोई एक इस मेरी सारी सेनाको ले ले—सारे ताजमहल, सारे स्तूप, सारे गेट-वे, सारे दिन बीते हुए—और कोई एक मुझे ले ले, मै अकेला हूँ, 'मेरे पास कोई शस्त्र नही'''

मै एकदम उठ बैठा हूँ। अब मै सिरहाने बैठा हुआ आदमी हूँ। ऊपर से ही नीचे झाँककर पूछ रहा हूँ—"क्या कहा तुमने ?"

"कुछ नही साहब। इस अन्धेको उतरना था कुरला और बैठ गया इस ट्रेनमे''''!"

"तो क्या यह कुरला नही रुकेगी ?" वह फिर पूछ रहा है और मै एकदम नीचे उतर आया हूँ। अभी मै बैठा हुआ आदमी था, और अब मैं खडा हुआ आदमी हूँ। मै खिडकीसे बाहर देख रहा हूँ।

यह गया माटुगा। माटु-उंगा, माटु-उंगा, माटु-उगा '''

यह गया शीव। शिव-शीव, शिव-शीव, शिव-शीव····

मैं जो सिरहाने बैठा था और मै जो खड़ा हूँ अपने पैरोंपर—दोनो ट्रेनके लुढकते पहियोकी तरह घूम रहे है, वार-बार टकराकर चिनगारी पैदा कर रहे है।

नही।

मेरा हाथ आगे बढा है और मैने जजीरको पकड़ लिया है। मै कुरलामें जंजीर खीच दूँगा। मेरा हाथ जंजीरके हैण्डिलको गोल-गोल घुमा रहा है। उस गोल-गोल घूमते हैण्डिलके साथ-साथ वे उतने सूरज घूमते जा रहे है जो एक-एककर कभी उतने बडे महाभारतके समय गुजरे होगे। लगातार आवाज़ और लगातार सूरजका गुज़रना।

"देखो, मैने कहा था न कि वह स्टेशन नही आयेगी।"·······

"देखो, मैने कहा था न कि वह तो उसने एकदम घबराकर कह दिया कि कल शाम फैसला कर लेगे।"

"देखो, मैने कहा था न कि वही बात सही है।····"

चलती ट्रेनकी पटरी बदल गयी है। रास्ता डायवर्ट हो गया है। दिशान्तरका एक हलका झटका मेरे सारे शरीरको हिला रहा है। ट्रेनकी लुढकन, ट्रेनकी आवाज़ और तेज़ होती जा रही है।

मै यूँ अकेले खडे-खड़े जाने क्या-क्या देख रहा हूँ .

● हम सबके ऊपरसे सूरज तेज़ीके साथ गुजरता चला जा रहा है।

● जालीकी आलमारीके ऊपर खरगोशवाले मेजपोशपर रखी स्पोर्ट-शर्टवालेकी तसवीर एकदम हटा दी गयी है।

● प्लैटफ़ॉर्मपर एक संगमरमरमे-से दो हाथ फूट रहे है, दो आँखें उग रही है·······!

सामनेसे कुरला गुजर रहा है और मेरा हाथ उस जंजीरके हैण्डिल पर-से फिसलकर नीचे गिर गया है।

■

टिप्पणियाँ

● ●

१.

मेरी चार आयामोंवाली तसवीर

- मै सोच रहा था जो कम्बल खीच सोऊँगा तो सारी दूरी अपनी गहरी नीदसे नाप डालूँगा। कॉंटे पूरा डायल नाप जायेगे, मुझपर-से सुबहे-दोपहरे-शामे सब गुजर जायेगी और मै अपनी जगह जब उतरूँगा तो एक खयाल आगे चला होऊँगा।
  ...एक खयाल आगे या एक खयाल पीछे? शायद आगे, शायद पीछे...

- लाश? लाश है? किसकी लाश है?
  चाहता हूँ इन प्रश्नोको सुनकर उठ बैठूँ और कहूँ कि यह मेरी लाश है। मै अपनी मृत्युकी ऐसी ही कल्पना करता हूँ। वही अनवरत छक्-छक्-छक्, छक्-छक्-छक् तेज़, तेज और तेज होती जाये और मै कभी नही टूटनेवाली नीदमे सो जाऊँ।

- मै कुछ नही जानना चाहता, मै तो केवल यह जानना चाहता हूँ कि जितनी जगह मैने पीछे छोड दी है, मुझे कोई यह बात बता दे कि कितना समय मैने पीछे छोड दिया है : मील-मीटर, घण्टे-मिनिटसे क्या लेना देना? मै इस कम्बलको ओढे-ओढे, इस ऊपरकी बर्थसे नीचे झाँकते-झाँकते ही सुबहको शाम और पठानकोटको दिल्ली कर दूँगा। मेरी घडी तो स्थान है जैसे : पठानकोट बजे सुबह हुई थी, दिल्ली बजे रात होगी। मेरी सारी उम्र भी वर्षोंमे कहाँ कटी

है : एक, दो, तीन, चार···चौबीस, पच्चीस, छब्बीस···ऐसे थोड़े ही बडा हुआ हूँ मै – मैने एक अनवरत छक्-छक्-छक् सुनी है और मै एक सालका हो गया हूँ, मै कोयले बीनने गया हूँ और मै पाँच सालका हो गया हूँ···अनुभवको वर्षोसे कोई कैसे नापेगा ? जिसके पास जितने अनुभव वह उतना जवान, जिसके पास जितनी यादें वह उतना वृद्ध, जिसके पास जितने खयाल वह उतना दार्शनिक।

- जरूरत है उस सायलेंसरकी जो आदमीके उस दिमागमे फिट किया जा सके जहाँसे शान्त, निश्शब्द रातमे भी कोई रेल छक्-छक् करती प्लैटफॉर्म छोडती है, जहाँ कई-कई सतलजोके पुल है, जहाँ कई कई हावडा ब्रिज है, जहाँ एजिनके लिए दो-चार एंजिन लगाने-जैसी चढाइयाँ है···

- मै पागलकी तरह उस आवाज़को खोजता हूँ लेकिन थक जाता हूँ··· कही वह आवाज कस्तूरी तो नही है। कहते है न कि कस्तूरी मस्तिष्कमे भरी रहती है···?

- कभी मै एकमे एकको जोडकर ट्रेनकी बर्थपर सोते हुए काटी गयी रातोकी लम्बाई नापूँ तो मेरी उम्र सत्रहकी हो जाती है। एक चलती हुई गतिके कारण नीद डूबा शरीर लगातार हिल रहा है, एक चलती हुई आवाज़ बगैर धुन बदले उसी तरह बढती जा रही है। धुन बदलती भी है – कभी पुलपर, कभी मोडपर, कभी चढाईपर, कभी उतराईमे – लेकिन धुन अन्तरेमे जाकर फिर टेक-पर लौट आती है।

- लेकिन मुझे प्यास नही लगी है। मेरी प्यास तो यह जानना है कि मै कहाँ आ गया हूँ, कितने स्टेशन आगे आ गया हूँ, कितना वक्त हो गया है ? भूख और प्यास और नीद और सपने और स्वाद···ये सब तो पुरानी सदियोकी बातें है।

- मै जिस समय पीछेकी तरफ देखूँगा — मेरा सारा जीवन, मेरे जीवनका एक-एक वर्ष, एक-एक क्षण मुस्तैद सावधान खडा हो जायेगा। मै आँखोसे एक-एककी वरदी चेक करूँगा। मै ख़ुद उन सबको फॉल-इनकी आज्ञा दूँगा। मेरी उम्रका कोई भी वर्प मर भले जाये लेकिन उसे परेड करते हुए मरना होगा। मेरे अनुभव दूध नही है जो फट जायें, मेरी उम्र बाज़ारकी मिठाई नही है जो उसमे से दुर्गन्ध छूटने लगे — या तो वह शारा है या शराब।

- मेरे पास कितना बडा बचपन है लेकिन उसका कोई भी अश अतीत नही हुआ। एक ऐसा दिन नही जो फ्लैगकी तरह चमके और मुझे चौकाये, एक ऐसा क्षण नही जो बीता हुआ कहलाये और उसपर मै आँसू बहाऊँ। वह सब वर्तमान है और मेरा इतना अधिक निजी है जैसे पहलोको मिलो हुई पगार हो।

- मेरी उँगली एक सुबह, एक जगल, एक पुल, एक चलती हुई ट्रेन, एक थर्ड क्लासके डब्बे, एक बर्थपर घूमकर रह जाती है···। कैसा लगा होगा मेरी छोटी-छोटी आँखोको पलक उघारते ही शीशेके पार गुजरते हुए दृश्योको देखते ? कैसा लगा होगा मेरे छोटे-छोटे कानोको एक अनन्त गूँजको बेधकर नजदोक आती लगातार छक्-छक्को ग्रहण करते ? जिस थर्ड क्लासकी लकडीको मैने जनमते ही महसूस किया वह कितनी अपनी-सी है···

- सोचना चाहे जितना लम्बा हो सकता है लेकिन यह सही है कि मै इस स्टेशनपर चन्द मिनिट ही रुका हूँ। वर्तमान बहुत छोटा और सँकरा है न, शायद इसीलिए हम बीते हुए मे जीवित रहना चाहते है।

- कही कभो कोई झगडा नही, सबके डब्बे निश्चित, सबकी जगहे निश्चित, सब-कुछ इतना अधिक तै, इतना अधिक निश्चित, इतना

अधिक पटरीपर था कि दूरसे देखनेपर आदमी आदमी नही मशीन लगता था। शट्टसे ट्रेन आयी, फट्टसे बैठे, छक्कसे ट्रेन चली ' 'जैसे लिफ्टमे ऊपर जातेमे रुकते समय एक हलका-सा मीठा गिराव जो होता है, वही महसूस करते रहते थे हम हमेशा।

- मेरे साथ उलटा होता है कि मै गुज़र जाता हूँ और जगहे खडी रह जाती है, घटनाएँ खडी रह जाती है, प्रतीक्षा प्लैटफॉर्म-टिकिटके सफेद रगको हथेलीमे महसूस करती रह जाती है।
- वर्तमान यानी काले बाल। अतीत यानी सफेद बाल।
- ये ताजमहल-फाजमहल तो डायवर्ज़न है — अच्छे-भले वर्तमानमे चल रहे है और ये खीचकर अतीतके रास्ते चला देते है, सिरहाने बैठे, सिर चढ जायेगे।' 'खटके और स्विचसे जब भावुकता आये-जायेगी तो ताजमहल नाइट-लैम्पकी कीमतका हो जायेगा।
- इस जमानेमे हमे आस-पासके शोर और ट्रेन-लाचकी छक्-छक्, भड-भडसे डिस्टर्ब नही होना चाहिए''''समझ लीजिए हम चर्चगेटके बीचमे ही खडे है और लगातार वही खडे रहना है।''''
- हर ग्लासमे एक मरा हुआ दिन लाशकी तरह तैरकर ऊपर आ जाता है। एकको निकालकर फेंको तो दूसरा आ जाता है और दूसरेको फेंको तो तीसरा''''और पी जाओ तो वही दिनपर चढ जाता है।
- एक बीत जानेके फीलिगसे सर उठाकर ऊपर देखता हूँ। बेसिनके ऊपरवाले आईनेमे मेरे सफेद बाल और सफेद दिखने लगे है। एक बचपन है मेरे पास जिसे याद करता हूँ तो उम्रसे अधिक जवानी अनुभव होती है और एक यह जवानी है जिसकी याद भरसे बाल सफेद हो जाते है''''
- मैं भी उस तबके वर्तमानको अब जुगाल रहा हूँ—चबाये जा रहा हूँ उसे, जितना चबाता हूँ उतना ही वह पिसकर बारीक होता जा रहा है''''

दस साल पीछे अतीतमे जाओ, अभी इस समयके इस क्षणपर चलो, फिर पच्चीस साल आगे भविष्यमे उडो और इन तीन आयामोमे गति-पर गुजरती मेरी उम्रकी लम्बाईको जोड दो····। इस समीकरणको यदि कोई हल कर ले तो वह यह बतला सकता है कि मै कहाँ हूँ । जो बीता हुआ था वह मेरे सामने है । आजके मेरे मज़बूत कदम भी मेरे पास है । इन दोनोको मै टकरा रहा हूँ – देखूँ कौन बचता है इन दोनोमे-से ?

वही, हाँ वही आदमी मै भी हो गया हूँ आज, कह देता हूँ जगकर कि कोई एक इस मेरी सारी सेनाको ले ले – सारे ताजमहल, सारे स्तूप, सारे गेट-वे, सारे दिन बीते हुए – और कोई एक मुझे ले ले, मै अकेला हूँ, मेरे पास कोई शस्त्र नही है····



२

मेरे यात्रा-पथ

(डाउन-ट्रिप)

पठानकोट – गुरदासपुर – धारीवाल – बटाला – अमृतसर – जलन्धर सिटी – जलन्धर कैण्ट – लुधियाना – अम्बाला सिटी – अम्बाला कैण्ट – कुरुक्षेत्र – पानीपत – नयी दिल्ली – मथुरा – राजा की मण्डी – आगरा कैण्ट – ग्वालियर – झाँसी – बीना – साँची – भोपाल – इटारसी – खण्डवा – भुसावल – भादली – जलगाँव – शिरसोली – महसावड – माहेजी – परधाडे – पाचोरा – चालीसगाँव – मनमाड – नासिक रोड – इगतपुरी – कसारा – कल्याण।

(अप–ट्रिप)

बम्बई वी टी – मसजिद (कर्नाक ब्रिजका रास्ता) – भायखला – परेल – दादर – माटुंगा – शीव – कुरला – घाटकोपर भाण्डुप – मुलुण्ड – थाना – काल्वा – मुम्बरा – दिवा – डोम्बिवली – ठाकुरली – कल्याण।

(डाउन - ट्रिप)

वी टी – कुरला – कल्याण – पुणे।



३.

सन्दर्भ और मेरे संस्कारज शब्दों के अर्थ

१. भविष्यवादी आन्दोलनका प्रवर्तक इटलीका प्रसिद्ध कवि। २. आधुनिक चित्रकलाकी एक शैली, जिसमे गतिमयता और चलचित्र-प्रभावको विशेष महत्त्व दिया गया। ३. बादशाह तुम्हारा कम्बल नीचे गिर गया है। ४. पिताके लिए सम्बोधन। ५ सो जा। ६. क्या? ७ क्या आया? ८. आया होगा रे! ९. घण्टा। १०. कहाँ? ११ माँ के लिए सम्बोधन। १२ मठरी। १३. श्री समर्थ रामदास स्वामी रचित बीस दशक दस समास मे विभाजित उपदेश-ग्रन्थ। १४. क्या चल रहा है? १५. थैली। १६. दाढी जमानेका तेल। १७. पागल लडका। १८ कैसा लग रहा है रे? १९. मै तो सचमुच रेलगाडी हो गया। २० चल। जल्दीसे चल, नही तो ट्रेन चली जायेगी। २१. मैंने तेरे लिए डब्बा तैयार किया है रे…। २२. खूब घी लगी रोटियाँ और बैगनकी सब्जी। २३. डर। २४. नही, मुझसे नही चला जाता। २५. चल, चलता नही है गधे…। २६. सिगनल हो गया…। २७. जल्दी आ रे…। …२८. नही तो मर गया होता। २९. पठानकोट-बम्बई एक्सप्रेस। ३०. बन्दर छाप। ३१. बम्बई-वाराणसी एक्सप्रेस। ३२. पंजाब मेल। ३३ बम्बई सेण्ट्रल रेलवेका गुड्स ऑफिस। ३४. वाया नागपुर–कलकत्ता मेल। ३५. बम्बई-पठानकोट एक्सप्रेस। ३६. प्लैटफॉर्म नम्बर फलाँ-फलाँपर छूटनेमे है। ३७. मकानके दलालको

दी गयी घूस। ३८. लघुशंका। ३९. छोटे बच्चे। ४० मै ब्रेक लगाऊँ, लगाऊँ, लगाऊँ " कि ट्रेन मेरे हाथसे निकल गयी, मै पंढरीनाथका स्मरण करूँ, करूँ, करूँ, कि भिडन्त हो ही गयी, क्या दृश्य था च्च्। ४१ जालीदार कैबिन। ४२ मालगाडी आ गयी ?····गाडी खोल दी ? सील तोड डाली ? इण्ट्री ले ली ? आल क्लियरेन्स हो गया ?··· ४३ कामसे भाग जाना। ४४. गडबड। ४५ भगदड। ४६ समुद्रकी लहर। ४७ चाबी। ४८ शराब। ४९. नमक। ५०-५१. बिछावन-ओढन। ५२ आधा घण्टा। ५३. एक प्रकारकी तम्बाकू। ५४. स्टेशन मास्टर। ५५. दरवाजा। ५६. मिक्श्चर। ५७. ला, थोडी-सी सब्जी। ५८ ओ माँ! ५९. बुढिया। ६०. घबरा मत बहू। ६१. तुम्हारा जन्मस्थान ? ६२. मालबाबू। ६३. ज्वारकी रोटी। ६४. जीवन बीमा निगम। ६५ तिल्ली और गुड। ६६. मूँगफली और चने। ६७ कसम तेरी वेणीकी। ६८. विभिन्न प्रकार-का भोजन। ६९ भुमावल जल्दी आओ। अण्णा बीमार। ७० बघारी हुई सूखी दाल। ७१ बाजेवाले। ७२. सीधे पल्लेवाली पाँच गजकी साडी। ७३. कै। ७४ एकसे एक लगकर 'क्यू' मे खडे लोग। ७५ आज मुझे पगार मिली है तो मै तो घर जा रहा हूँ। दो गाडियाँ बच गयी है तो सेठ लेगा इण्ट्री··· ७६. बरतन। ७७ किस्त न चुकानेपर मियाद-ऊपर बीमा निगम-द्वारा लौटाया गया रुपया। ७८ निवास-स्थान। ७९. गोबर। ८०. उपले। ८१. साईं बाबाका जन्मस्थान।



दी गयी घूस। ३८. लघुशंका। ३९. छोटे बच्चे। ४० मै ब्रेक लगाऊँ, लगाऊँ, लगाऊँ" कि ट्रेन मेरे हाथसे निकल गयी, मैं पंढरीनाथका स्मरण करूँ, करूँ, करूँ, कि भिडन्त हो ही गयी, क्या दृश्य था च्च्। ४१ जालीदार कैबिन। ४२ मालगाडी आ गयी ?....गाडी खोल दी ? सील तोड डाली ? इण्ट्री ले ली ? आल क्लियरेन्स हो गया ?... ४३ कामसे भाग जाना। ४४. गडबड। ४५ भगदड। ४६ समुद्रकी लहर। ४७ चाबी। ४८ शराब। ४९. नमक। ५०-५१. बिछावन-ओढन। ५२ आधा घण्टा। ५३. एक प्रकारकी तम्बाकू। ५४. स्टेशन मास्टर। ५५. दरवाजा। ५६. मिक्श्चर। ५७. ला, थोडी-सी सब्जी। ५८ ओ माँ! ५९. बुढिया। ६०. घबरा मन बहू। ६१. तुम्हारा जन्मस्थान ? ६२. मालबाबू। ६३. ज्वारकी रोटी। ६४. जीवन बीमा निगम। ६५ तिल्ली और गुड। ६६. मूँगफली और चने। ६७ कसम तेरी वेणीकी। ६८. विभिन्न प्रकार-का भोजन। ६९ भुमावल जल्दी आओ। अण्णा बीमार। ७० बघारी हुई सूखी दाल। ७१ बाजेवाले। ७२. सीधे पल्लेवाली पाँच गजकी साडी। ७३. कै। ७४ एकसे एक लगकर 'क्यू' में खडे लोग। ७५ आज मुझे पगार मिली है तो मैं तो घर जा रहा हूँ। दो गाडियाँ बच गयी है तो सेठ लेगा इण्ट्री... ७६. बरतन। ७७ किस्त न चुकानेपर मियाद-ऊपर बीमा निगम-द्वारा लौटाया गया रुपया। ७८ निवास-स्थान। ७९. गोबर। ८०. उपले। ८१. साईं बाबाका जन्मस्थान।

